ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी व सिंधी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २० अंक : ११
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २२१)
१ मई २०११ मूल्य : रु. ६-००
वैशाख-ज्येष्ठ वि.सं. २०६८

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	रु. ६०/-	रु. ७०/-
द्विवार्षिक	रु. १००/-	रु. १३५/-
पंचवार्षिक	रु. २२५/-	रु. ३२५/-
आजीवन	रु. ५००/-	----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	रु. ३००/-	US $ 20
द्विवार्षिक	रु. ६००/-	US $ 40
पंचवार्षिक	रु. १५००/-	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.). फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
: www.rishiprasad.org

(१) आर्षवाणी ४
✼ अद्भुत है आत्मविद्या !
(२) मधु संचय ६
✼ कैसी सत्ता है !
(३) उपासना अमृत ८
✼ यस्य स्मरणमात्रेण...
(४) ज्ञान दीपिका १०
✼ सफल जीवन किसका ?
(५) संयम की शक्ति ११
✼ ब्रह्मचर्य का तात्त्विक अर्थ
(६) जीवन पथदर्शन १२
✼ सच्चा वशीकरण मंत्र
(७) जीवन-संजीवनी १५
(८) एकादशी माहात्म्य १६
✼ निर्जला एकादशी
(९) युवा जागृति संदेश १८
✼ उद्यमः साहसं... आदि से परमात्म-सहायता
(१०) ज्ञान गंगोत्री ✼ एक अद्भुत इलाज १९
(११) विद्यार्थियों के लिए २१
✼ नश्वर लुटाया, शाश्वत पाया
(१२) विद्यार्थी-जीवन में महत्त्वपूर्ण बातें २२
(१३) 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' ज्ञान पहेली २३
(१४) अक्ल लड़ाओ, ज्ञान बढ़ाओ २३
(१५) शास्त्र प्रसाद ✼ मन की समता २४
(१६) इक बूँद से राख की मुट्ठी तक... २६
(१७) प्रेरक प्रसंग २७
✼ दूसरों के मंगल में हमारा मंगल
(१८) गौ-महिमा २८
✼ पृथ्वी का अमृत : गौदुग्ध
(१९) सेवा संजीवनी ३०
✼ तू तो क्या तेरा पति भी आयेगा !
✼ तुलसी माला बनी रक्षा-कवच
(२०) भक्तों के अनुभव ३१
✼ बच्चों को प्रभावशाली बनाने का राज
✼ नोबल शांति पुरस्कार मिला, अब परम शांति पुरस्कार चाहिए
(२१) संस्था समाचार ३२

विभिन्न चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

A2Z NEWS	Zee JAGRAN	दिशा	संस्कार	care WORLD	सत्संग टी.वी.	JUS one (अमेरिका)	Ashram TV LIVE
रोज प्रातः ३, ५-३०, ७-३० बजे, रात्रि १० बजे तथा दोप. २-४० (केवल मंगल, गुरु, शनि)	रोज सुबह ८-४० बजे	रोज दोपहर २-३० बजे	रोज दोपहर २-१० बजे	रोज सुबह ७-०० बजे	रोज रात्रि १०-०० बजे	सोम से शुक्र शाम ७ बजे शनि-रवि शाम ७-३० बजे	आश्रम इंटरनेट टीवी २४ घंटे प्रसारण

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✼ A2Z चैनल रिलायंस के 'बिग टीवी' पर भी उपलब्ध है। चैनल नं. 425 ✼ Zee Zagran चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 750 ✼ दिशा चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 757 ✼ care WORLD चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 770 ✼ JUS one चैनल 'डिश टीवी (अमेरिका)' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 581 ✼ इंटरनेट पर www.ashram.org/live लिंक पर आश्रम इंटरनेट टी.वी. उपलब्ध है।

Opinions expressed in this magazine are not necessarily of the editorial board.Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

अद्भुत है आत्मविद्या !

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

मानव-जन्म बड़ा कीमती है। समस्त साधनों का धाम व मोक्ष का द्वार यह मनुष्य-शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है। संत तुलसीदासजी कहते हैं :

बड़ें भाग मानुष तनु पावा ।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ।
पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥

(श्री रामचरित. उ.कां. : ४२.४)

इस मनुष्य-जीवन को यदि सही ढंग से सद्गुरुओं के मार्गदर्शन के अनुसार जिया जाय, उसीके अनुसार जप, ध्यान, साधनादि किये जायें तो केवल आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं, वरन् भौतिक दृष्टि से भी हम पूर्णतया सफल हो सकते हैं। इतना ही नहीं, हम परब्रह्म परमात्मा का दीदार भी कर सकते हैं। जो बाह्य वस्तुएँ पाकर सुखी होना चाहता है, जो अपने जीवन में बीड़ी, सिगरेट, शराब आदि का आदर करता है, उसके जीवन में खिन्नता, अशांति और बेचैनी व्याप्त हो जाती है। किंतु जो व्यक्ति सत्संग का, ऋषियों का, उनके बताये गये जीवन जीने के सिद्धांतों का आदर करता है उसका जीवन प्रेम, आनंद, शांति और प्रसन्नता से परिपूर्ण हो जाता है। आप हजारों रुपये लेकर बाजार में घूमो और प्रसन्नता देनेवाले साधन-वस्तुएँ खरीदो। उनसे आपको इतना आनंद नहीं आयेगा जितना कि सत्शिष्य को सद्गुरुओं के दर्शन व सत्संग से आता है।

सुकरात के प्रति सहानुभूति रखनेवाले कई सेठ एक दिन सुकरात को लेकर बड़े-बड़े बाजारों, स्टोरों में दिन भर घूमे। 'चाहे करोड़ों तक का सामान भी यदि सुकरात खरीदेंगे तो हम अभी ही उसका भुगतान कर देंगे', यह सोचकर उन्होंने जवाहरात, फर्नीचर, खाद्य वस्तुओं आदि एक-से-एक मनलुभावनी चीजोंवाले स्टोर दिखाये। संध्या हो गयी। अभावग्रस्त जीवन जीनेवाले सुकरात ने दिन भर घूमने के बाद भी कुछ नहीं खरीदा। सेठों को अत्यंत आश्चर्य हुआ। सुकरात ने सब स्टोरों में घूमने के बाद आश्चर्य को भी आश्चर्य में डाले ऐसा नृत्य किया। सेठों ने आश्चर्य से पूछा : ''आपके पास न फर्नीचर है, न सुखी जीवन की कुछ सामग्री है। हमें कई दिनों से तरस आ रहा था इसलिए आपको स्टोरों में घुमाया और बार-बार हम कहते थे कि 'कुछ भी खरीद लो ताकि हमें सेवा का कुछ मौका मिले।' अब आप और हम घूम के थक गये। आपने खरीदा तो कुछ नहीं और अब मजे से नृत्य कर रहे हैं !''

भारतीय तत्त्वज्ञान के प्रसाद से प्रसन्न हुए उस तृप्तात्मा सुकरात ने कहा : ''तुम्हारे पास ऐहिक सुख-साम्राज्य होने पर भी तुम उतने सुखी नहीं जितना बिना वस्तु, बिना व्यक्ति और बिना सुविधा के मैं सुखी हूँ, इस खुशी में मैं नाच रहा था।''

अभावग्रस्त परिस्थिति और कुरूप शरीर में सुकरात इतने सुखी और सुरूप तत्त्व में पहुँचे थे कि कई सुखी व सुरूप उनके चरणों के चाकर होने से अपने को भाग्यशाली मानते थे। अद्भुत है आत्मविद्या ! काली काया, ठिंगना कद, शरीर में आठ-आठ वक्रताएँ... ऐसे कुरूप शरीर में भी अष्टावक्रजी परमात्मस्वरूप की मस्ती से अंदर से इतने सुरूप हुए कि विशाल काया व विशाल राज्य के धनी जनक उनके शिष्य कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे। सुकरात का शिष्य होने में प्लेटो भी गौरव का अनुभव करता था। क्या तुम अपने उस आत्मा के सौंदर्य को पाना चाहते हो ? प्रेमरस-

प्यालियाँ पीना चाहते हो ? जन्म-जन्म की कंगालियत मिटाना चाहते हो ?... तो उस आत्मधन परमेश्वर-प्रसाद को पाये हुए महापुरुषों को खोजो। प्लेटो की नाईं सुकरात को, जनक की नाईं अष्टावक्र को, नरेन्द्र की नाईं रामकृष्ण को, सलूका-मलूका की नाईं कबीर को, बाला-मरदाना की नाईं नानकजी को खोजो। अटूट श्रद्धा, दृढ़ पुरुषार्थ, पवित्र और निःस्वार्थ प्रेम से उन महापुरुषों के साथ जुड़ जाओ, फिर देखो मजा ! कोहिनूर देनेवालों से कंकड़-पत्थर माँगकर अपने अहं के पोषक नहीं, राग-द्वेष के शिकार नहीं, सच्चे तलबगार बनना...

आप जिसके हितैषी हैं, उसकी उन्नति देखकर आपके हृदय में प्रसन्नता होती है और उसका पतन देखकर आपके हृदय को ठेस पहुँचती है। किंतु गुरुजन, संतजन तो किसी एक-दो के नहीं, वरन् मानवमात्र के हितैषी होते हैं। सद्गुरुओं के मार्गदर्शन में जीवन जीने से मनुष्य समस्त आपदाओं से पार हो जाता है। तब काल भी अपना सिर कूटता है गुरुओं के प्रसाद को देखकर। वह सोचता है कि 'मैंने कई बार इस जीव को मारा था किंतु अब गुरुओं के, संतों के प्रसाद को पाकर यह जीव जीवन-मरण के पाश से मुक्त हो जायेगा। मेरा शिकार चला गया...।' संत कबीरजी कहते हैं :

मन की मनसा मिट गयी, अहं गया सब छूट।
गगन मण्डल में घर किया, काल रहा सिर कूट ॥

सद्गुरुओं के सान्निध्य से जीव को जन्म-जन्मांतरों का जो भ्रम था कि 'मैं देह हूँ... जगत सच्चा है' वह दूर हो जाता है। अपने शरीर को सदा टिकाये रखने की वासना निवृत्त हो जाती है। क्योंकि जीव को पता चल जाता है कि 'मैं सदा हूँ, अमर हूँ, मेरे वास्तविक स्वरूप का कभी नाश नहीं होता और शरीर किसीका भी होकर सदा नहीं टिकता।

मैं आनंदस्वरूप हूँ। आनंद किसी बाह्य वस्तु में नहीं है वरन् मेरा अपना-आपा ही आनंदस्वरूप है। आज तक मैं जो सोच रहा था कि वस्तुओं में सुख है, पद-प्रतिष्ठा में सुख है, विदेशों के, विलासी देशों के वातावरण में सुख है। वह सुख न था, मेरी ही भ्रांति थी। ऋषिकृपा से, गुरुकृपा से मेरी वह भ्रांति दूर हो गयी और अब पता चला कि सब पदों का जो बाप है वह आत्मपद मैं ही हूँ। सब सुख जहाँ से प्रगट होते हैं वह सुखस्वरूप, वह आनंदस्वरूप आत्मा मैं ही हूँ।'

जब गुरुओं का प्रसाद मिलता है, भीतरी रस जब मिलने लगता है, अंतर्यामी परमात्मा का स्वभाव जब प्रगट होने लगता है तब इस जीव की 'मैं'पने की समस्त भ्रांतियाँ, वासनाएँ मिट जाती हैं और वह चिदाकाशरूपी गगनमण्डल में अपना घर कर लेता है अर्थात् अपने आपको अपने घर में ही पा लेता है। अभी तक तो वह अपने को हाड़-मांस के घर में मान रहा था। जबकि हाड़-मांस का घर ईंट-चूने के घर के सहारे और ईंट-चूने का घर पृथ्वी के सहारे था। पृथ्वी जल पर, जल तेज पर, तेज वायु पर और वायु आकाश के सहारे थी। आकाश भी महत्तत्त्व के सहारे, महत्तत्त्व प्रकृति के सहारे था और हम प्रकृति से प्रेरित होकर जन्म-मरण के चक्र में जी रहे थे, किंतु गुरुओं की कृपा से अब हमें पता चला है कि प्रकृति चल रही है, हम अचल हैं। ऐसे निजस्वरूप में जगानेवाले सद्गुरुओं के चरणों में हमारे कोटि-कोटि प्रणाम हैं...। ❐

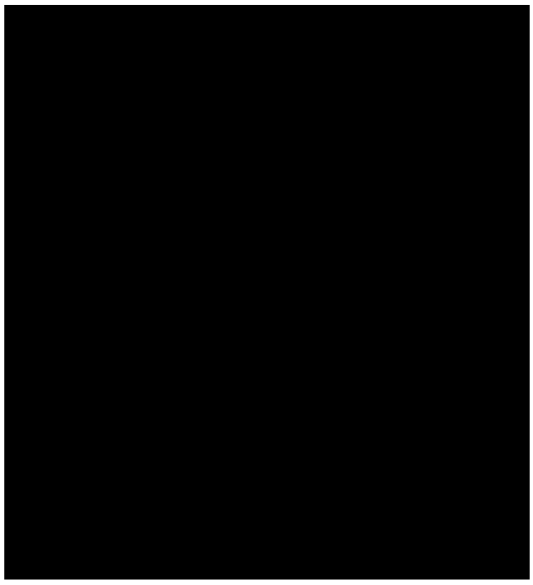

कैसी सत्ता है !

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

शरणानंदजी महाराज हो गये । सूरदास थे लेकिन अंदर की आँखें पूरी खुली थीं । दस साल की उम्र में उनकी आँखें चली गयीं, उदास रहे। संतों के सम्पर्क में आये, उदासी और दुःख मिटा लेकिन दुःखहारी की चर्चा सुनते-सुनते इतने उच्च कोटि के महापुरुष बन गये कि आँखें नहीं थीं फिर भी पढ़े हुए लोग अखण्डानंदजी, आनंदमयी माँ, गांधीजी जैसे, पंडित दीनदयाल, मदन मोहन मालवीयजी, नेहरूजी और भी कुछ राजेन्द्र बाबू जैसे उनके सत्संग का आस्वादन करके धन्यता का एहसास करते थे । शरणानंद महाराज की भगवान में ऐसी प्रीति थी कि उनकी भगवत्-व्याख्या, भगवत्कृपा और भगवद्-अनुभूति की बातें बिल्कुल शास्त्रसम्मत आती हैं ।

उनका ईश्वर में बड़ा विश्वास था । **विश्वासः फलदायकः ।** वे बताते थे कि एक बार वे हरिद्वार से यमुनोत्री जा रहे थे । यमुना-किनारे यात्रा करते-करते बीमार पड़ गये । वैसे तो लोग थे उनके साथ लेकिन भगत लोग थे, हिमालय की यात्रा थी, पैदल का जमाना था । कुछ यात्री रुके; कोई एक दिन, कोई दो दिन, कोई तीन दिन... आखिर कोई कब तक देखता है ! सब चले गये, शरणानंद महाराज अकेले रह गये । स्वस्थ हुए तो फिर चलते गये-चलते गये तो क्या हुआ कि कहीं से कोई ढेर गिर पड़ा यमुनाजी में धप्पऽऽ ! इन्हें धक्का लगा और ये खुद भी यमुना में जा गिरे । तैरना तो जानते थे पर यमुना माँ के बहाव में बहे जा रहे थे । हाथ से लकड़ी छूट गयी । अब किधर को जायें, आँखें तो थीं नहीं ! किंतु हृदय में ईश्वर का, उसकी सत्ता-सामर्थ्य का विश्वास था ।

'अब तेरी मर्जी पूरण हो ।'- इतना कहा कि दूसरे क्षण में रेतीला स्थान मिल गया, उसके सहारे खड़े हो गये । आँखें तो थीं नहीं फिर भी लकड़ी हाथ में आ गयी !

'तू कैसा है, कैसी तेरी सत्ता है ! कितना तू ख्याल करता है !...'

भगवान की कृपा-करुणा से, अहोभाव से हृदय पावन हो गया, भर गया ।

गुलाब में उसीकी चेतना है । कैसा रंग... कैसा बीज... कैसी सुगंध !... मोगरे-मोतिये की अपनी सुगंध है, तुलसी के अपने गुण-धर्म हैं । है तो एक लेकिन जहाँ-जहाँ जाता है, जैसा-जैसा निमित्त है, वैसा-वैसा उसमें कैसा खेल करता है ! वाह प्रभु !

परमात्मा का चिंतन करके हृदय सुख से, सद्बुद्धि से, सद्भाव से इतना भर जाता है कि दुनिया के टॉनिक तुच्छ हो जाते हैं ।

है तो हृदय छोटा-सा लेकिन उसके द्वारा कितने-कितने काम करवा देता है ! और हृदय जिस शरीर में रहता है उस शरीर का आरम्भ होता है पानी की बूँद से । पिता की एक चिकनी बूँद से वह शरीर बना और उसमें कैसा-कैसा डला है ! कैसी सत्ता है कि सुनती है, बोलती है, सूँघती है, चखती है ! कैसी सत्ता है कि सोचती है, विचारती है ! पानी की एक बूँद...!

उस नियंता की, सृष्टिकर्ता की, सर्वेश्वर की, परमेश्वर की कैसी महिमा है ! तेरी महिमा तू ही जाने ! हे जग के पालनहार ! मेरे प्यारे ! मेरे

इष्टदेव ! मेरे परमेश्वर ! तू कैसा है मैं नहीं जानता पर मैं जैसा-तैसा हूँ तेरा हूँ मेरे प्यारे ! मैं तुझे किस तरह पहचानूँ मुझे समझ में नहीं आता लेकिन तू मुझे किस तरह मिले तेरे से अजान नहीं है । मैं तुझे कैसे खोजूँ, मैं नहीं जानता । मैं तुझे कैसे पाऊँ, मैं नहीं जानता हूँ । लेकिन तू मुझे अपनी प्यास कैसे दे सकता है, यह तू जानता है और प्यास जगा-जगा के, भूख जगा-जगा के फिर तू मिले तो क्या रस आयेगा तू ही जानता है, क्या निश्चिंतता आयेगी तू ही जानता है, क्या निर्भारता आयेगी यह तू ही जानता है। हे प्रभु ! हे देव ! हे मेरे प्यारे ! नहीं मिला था तो कितने तड़प रहे थे और मिला तो लगा कि कितने आसान हो, कितने सरल हो हे प्रभु ! हे मेरे देव !

एक महात्मा के पास कोई पके केले ले गया । बाबा ने केला उठाया, छीला तो गिरी दिखी (भीतर का गूदा दिखा) । महात्मा की आँखों से प्रेम के आँसू बरसे... इतना बढ़िया हलवा, इतनी सारी कैलोरी कैसे कवर (आवरण) में छुपा के रखी और यहाँ तक लाने की उसे प्रेरणा दी ! तू कैसा है प्रभु ! किसने इसमें मिठास भर दी ! यह कवर कैसे बना ! ऐसा सदैव-सदैव सुहावना, कोमल-कोमल केले का हलवा... यह तू कैसे बनाता है !

महात्मा को वह केला नहीं दिखता है, भगवान का प्रसाद दिख रहा है । महात्मा वह प्रसाद खा रहे हैं । लारीवाले के पास केले थे, भक्त के पास वस्तु थी, महात्मा के पास भगवान की प्रसादी थी । प्रसाद बनकर तू आया और खाने की सत्ता भी तू ही देता है, हे प्रभु ! हे परमेश्वरा !

जिसका रसमय, प्रेममय, भावमय हृदय है वह भगवान की लीला, भगवान की सत्ता, भगवान की करुणा, भगवान की प्रेरणा का चिंतन करते-करते भगवन्मय हो जाता है । जिसमें वैराग्य की तीव्रता है, विचार की शक्ति है, वह सोचे, 'मैं... मैं... मैं क्या है ? यह हाथ मैं नहीं हूँ, पैर मैं नहीं हूँ, सिर मैं नहीं हूँ । फिर **'नेति-नेति'** करते-करते 'आखिर मैं कौन हूँ' खोजे । वेदांत शास्त्र का अभ्यास करते हुए 'मैं कौन हूँ' इसको खोजता जाय ।

शरीर पंचभौतिक है । पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश - ये पाँच भूत, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्राएँ - ये बीस और मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ये सब मिलाकर कुल चौबीस तत्त्व - ये सब प्रकृति के हैं, इनमें सत्ता तेरी । जैसे फूल, फल ये सब चीजें अलग-अलग हैं लेकिन सत्ता उनमें सूर्य की है । सूर्य अपने स्थान पर होते हुए भी सबमें मिला हुआ है । ये चीजें बन-बन के बिगड़ जायें, मिट जायें लेकिन सूर्य वही-का-वही ! आकाश सबसे मिला है, सबको ठौर देता है। हे आकाश ! तुझे नमस्कार है । तू भी ईश्वरस्वरूप है। जैसे ईश्वर पाँच भूतों को ठौर देता है, ऐसे ही तुमने सबको ठौर दे रखी है। हे जलदेवता ! तुझे नमस्कार है । जैसे ईश्वर सम है, रसस्वरूप है ऐसे ही तू रस देता है। हे अग्निदेव ! तुझे नमस्कार है। जैसे ईश्वर-चिंतन से सारे पाप जल जाते हैं, ऐसे ही तुझीमें सारी वस्तुएँ स्वाहा हो सकती हैं । जैसे ईश्वर-चिंतन करने से मन, बुद्धि रसमय हो जाते हैं, ऐसे ही अग्निदेव ! तुम्हारा उपयोग करने से सारे व्यंजन रसमय बनते हैं । साकार ईश्वर - ये पाँच भूत और निराकार ईश्वर इन चौबीस तत्त्वों से न्यारा, इनको देखनेवाला... इस प्रकार ज्ञानदृष्टि से ईश्वर का श्रवण करें, ईश्वर का चिंतन-मनन करें, अपने ईश्वर के ज्ञान में रहें ।

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं ।
फिर कोई माप-तौल, कल्पना नहीं ।
देख ब्रह्म समान सब माहीं ।। ❐

यस्य स्मरणमात्रेण...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

'महाभारत' में आता है कि

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

'जिसके स्मरणमात्र से मनुष्य आवागमनरूप बंधन से छूट जाता है, सबको उत्पन्न करनेवाले उस परम प्रभु श्रीविष्णु को बार-बार नमस्कार है ।'

जिसकी स्मृतिमात्र से जीव के रोग, शोक, पाप, ताप, दुःख, दरिद्रता, दुर्गुण चले जाते हैं, जिसका सुमिरन करनेमात्र से जीव संसारी बंधनों से मुक्त हो जाता है -

नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमो नमः ।

उस परमात्मा को नमस्कार है ।

दुनिया का ऐसा कोई आदमी, ऐसा कोई सेठ, कोई नेता देखा आपने कि आप उसका सुमिरन करो और आपको सब बंधनों से, सब पापों से मुक्त कर दे ? ऐसा कोई पति देखा ?

घर में पति आया, बोला : ''भोजन लाओ ।''

पत्नी बोली : ''मैं तो आपका सुमिरन ही करती रही ।''

पति एक दिन, दो दिन, पाँच दिन देखेगा, फिर बोलेगा : 'घर से भाग जा, जा के मायके में सुमिरन कर । मैं तो भूखा मर रहा हूँ और यह घर में काम नहीं करती, बस पति का सुमिरन कर रही है !' पति नाराज हो जायेगा लेकिन यह जगत्पति तो सुमिरनमात्र से तुम्हें जगत के दुःखों से मुक्त कर देगा । जो परेशानियाँ मिली हैं उनको दूर करके परम सुख दे देगा और जगत की चीजें तुम्हारे पीछे दास की नाईं भागेंगी । राजस्थान में जहाँ-जहाँ सत्संग हुआ, सुमिरन हुआ वहाँ-वहाँ बरसात हो गयी । जहाँ-जहाँ सत्संग होता है वहाँ सुख-शांति हो जाती है ।

एक डॉक्टर है, उसके हाथ के नीचे १५ डॉक्टर काम करते हैं । वह अपना क्लीनिक छोड़कर तीर्थयात्रा को गया । जब आया तो डॉक्टर लोग और उनके सहयोगी ४०-४५ लोगों का स्टाफ नाश्ता-वाश्ता कर रहा था ।

वह बोला : ''क्या करते हो, क्लीनिक में कितना धंधा हुआ ?''

कर्मचारी : ''डॉक्टर साहब ! आप गये थे न बद्रीनाथ, तब से हम आपका सुमिरन करते हैं, और कोई कामकाज नहीं करते । मरीज आते हैं तो उनको बोलते हैं, हम तो डॉक्टर के सुमिरन में रत हैं ।''

क्या डॉक्टर उन कर्मचारियों को, डॉक्टरों को रखेगा ? नहीं । बोलेगा : ''मूर्ख कहीं के ! मेरा क्लीनिक बिगाड़ दिया ।''

सेठ है, उसका बड़ा कारोबार है । आपको सौंपकर सेठ कहीं बाहर चले गये । आप लोग कारोबार बंद करके सेठ का सुमिरन करते हैं । सेठ का कारोबार चौपट हो जाता है । १०-१५ दिन के बाद सेठ आता है ऑफिस में, दुकान में । देखता है कि सब लोग काम-धंधा छोड़ के ऐसे ही बैठे हैं ।

वह बोलता है : ''क्या करते हो ! क्या माल बना, क्या बिका ?''

आप कहते हैं : ''सेठजी ! हम तो आपकी स्मृति करके, आपको भोग लगा के खाते हैं, आपका सुमिरन करते हैं बस !''

तो सेठ क्या आपको पगार देगा, इनाम देगा अथवा आपका योगक्षेम वहन करेगा ? आपका सर्वप्रकार से मंगल करेगा कि सर्वप्रकार से आपको सजा देगा, जूते मारेगा ?

वह आपको दण्ड देगा ।

लेकिन ये भगवान ऐसे हैं कि आप केवल उनका सुमिरन करो । **यस्य स्मरणमात्रेण...**

सेठ का काम नहीं करो, सुमिरन करो तो जूते खाओ और भगवान का सुमिरन करो तो अमृतरस पियो, सद्भाव और सद्गति पाओ और भगवान को पा लो। क्योंकि भगवान का आत्मा और अपना आत्मा एक ही है, अमृतमय है। उसका साक्षात्कार जितना सरल है उतना संसार को सँभालना असम्भव है । कितने भी कोर्स करो, कितनी भी पति-पत्नियों की बात मानो फिर भी दुःखों से छूटना असम्भव है । कठिन नहीं ! असम्भव है और भगवान का सुमिरन करो, साक्षात्कार करो तो दुःख का आना सम्भव नहीं है। आये तो तुमको दबा पाना सम्भव नहीं, उसका टिकना सम्भव नहीं । ऐसे भगवान को छोड़कर 'यह करूँ, वह करूँ, क्या करूँ... ?' नहीं, मुझे तो बस प्रभु चाहिए । भले सब भूल जाय पढ़ाई-लिखाई, सब देखा अनदेखा हो जाय, बस एक तुम्हारी स्मृति... !

श्रीकृष्ण साथ में हैं लेकिन अर्जुन का दुःख नहीं मिटता है। जब श्रीकृष्ण गुरु का पद सँभालते हैं, ज्ञान देते हैं तब अर्जुन को अपनी आत्मस्मृति आ जाती है । **नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा...**

शरीर को 'मैं' मानना और संसार को 'मेरा' मानना यह मोह है और सब दुःखों का, व्याधियों का मूल है ।

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला ।
तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥

यह मोह है न, फिर-फिर से संसार का शूल पैदा करता है, संसार का दुःख पैदा करता है ।

भगवान की स्मृति, भगवान में विश्रांति और भगवत्तत्त्व का ज्ञान सारे दुःखों को, सारे कष्टों को, सारी मूर्खता को हर लेता है ।

किसी सेठ-साहूकार, नेता, राजा का सुमिरन करो और काम न करो तो वह गाली देगा, जूते मारेगा, निकाल देगा, केस कर देगा कि 'मुफ्त में पगार खा गया। हमारा काम नहीं किया।' लेकिन भगवान के सुमिरनमात्र से दोष तो भगवान हरते ही हैं तथा योग और क्षेम का वहन भी करते हैं। हमारा बोझा उठाते हैं।

भगवान का सुमिरन करनेमात्र से सद्गुण तो आते ही हैं, सद्बुद्धि भी आती है, सच्चरित्र भी आता है और सत् का संग करके भगवान के स्वरूप को भी व्यक्ति पा लेता है, जान लेता है । ❐

सदैव ही भरपूर हो तुम

नजरों से ओझल ही सही, हृदय से भी करीब हो तुम ।
रोम रोम हर कण-कण में, सदैव ही भरपूर हो तुम ॥

तुम अपने हो गैर नहीं, ओतप्रोत व्यापक हो तुम ।
बसे हो सदा घट-घट में, चैतन्य ! नहीं दूर हो तुम ॥

'साक्षी' तुझे खोजूँ मैं कहाँ, हर नैनन का नूर हो तुम ।
अंतःकरण के आईने में, आनंदमय ! दिले तस्वीर हो तुम ॥

तुम हमसफर हो हमराही, राह डगर मंजिल हो तुम ।
बसे हो अनंत लिबासों में, जीवन की तकदीर हो तुम ॥

ज्ञानस्वरूप हो नित्य मधुमय,
सर्वव्यापक ! हाजिर हजूर हो तुम ।
मन वीणा के गुंजन में,
स्वर सोऽहम् झंकार हो तुम ॥
तुझसे महका है सारा जहाँ,
शक्तिमान ! सुखसार हो तुम ।
जीवन की हर बगिया में,
सत्य शिवम् रसधार हो तुम ॥

- साधिका 'साक्षी' ❐

सफल जीवन किसका ?

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

जीवन सफल उसीका है जो बिना विकारों, बिना बेईमानी, बिना लूट-खसोट के सहज में सुखी रह सकता है, औरों को सुखी कर सकता है।

एक बार हरि बाबा बदायूँ जिले (उ.प्र.) के गवाँ गाँव के पास गंगातट पर पहुँचे। उस समय गंगाजी में बाढ़ आयी हुई थी। गंगाजी का पानी इतना फैला हुआ था कि समुद्र की खबर दे रहा था। लोग बेघर हो गये थे। उन्हें दुःखी देख बाबा ने बाँध बँधवाकर उनकी विपत्ति दूर करने का निश्चय किया। उन्होंने अंग्रेज सरकार को कहा : ''बाँध बनवाओ।''

बदमाश अंग्रेजों ने कहा : ''हमारे पास पैसा नहीं है, फंड नहीं है।''

हरि बाबा ने कहा : ''कोई बात नहीं।''

सरकार अपना कर्तव्य भूल गयी तो सफल जीवनवाले ने उठाया फावड़ा, गेंती (कुदाल) और टोकरी। मिट्टी भरी, बोले : ''बाँध हम बनायेंगे।'' सैकड़ों नहीं, हजारों लोग फावड़े और टोकरियाँ लेकर बाबा के साथ बाँध बाँधने में लग गये। कई मजबूत तो कई लूले-लँगड़े लोग भी लगे। कई गरीब, मोहताज और कई किसान लगे, कई इंजीनियर और कई चपरासी लगे। पाँच-पचीस बड़े घराने के लोग भी जुट गये। गरीब-गुरबों की गरीबी मिटी, मोहताजों की मोहताजी मिटी, व्यसनियों के व्यसन मिटे, पापियों के पाप मिटे... 'हरि ॐ, हरि ॐ... हरि बोल, हरि बोल' के सामूहिक जयघोष ने आसपास के सभी गाँवों को हरिमय कर डाला। बारिश होने के पहले बाँध तैयार हो गया।

'हरि बाबा का बाँध' के नाम से आज भी वह दिखाई देगा। यह है सफल जीवन ! रोटी तो माँगकर खा ली और समाज को बाँध बनाकर दे दिया। समाज की तकलीफें दूर कर दीं।

बाँध निर्मित हो जाने के बाद बाबा ने वहाँ विशाल संकीर्तन-भवन, मंदिर तथा संतों के लिए कुटीरों का निर्माण कराया। कथा-कीर्तन एवं सत्संग-सत्रों का आयोजन कराया। प्रतिदिन लोग दूर-दूर से आकर कथा-कीर्तन तथा संत-दर्शन से लाभान्वित होने लगे।

सफल जीवनवाला एक व्यक्ति भी जहाँ होता है, वहाँ चारों तरफ सुखद माहौल बनाने में सक्षम होती है उनकी ज्ञानमयी दृष्टि, प्रेममयी दृष्टि, कर्मयोगमयी दृष्टि ! अनासक्ति से भरा हुआ आत्मस्वभाव सफल जीवन नहीं तो क्या है ! सफल जीवन जीना है तो जहाँ भी मौका मिले, तन से भगवत्प्रीति के निमित्त सेवा कर लो। ढिंढोरा मत पीटो। बाबा ने आसपास के सैकड़ों गाँवों को हरा-भरा करने में सफलता पायी लेकिन मैंने बाँध बनवाया है, यह अहंकार नहीं आया। यह सफल जीवन है।

मन से सुखी आदमी को देखकर प्रसन्न हो जाओ, दुःखी आदमी को देखकर द्रवीभूत हो जाओ। बुराईरहित होने का प्रयत्न करो। सफल जीवन आपके कदमों में आ जायेगा। भलाई करो लेकिन अभिमान छोड़ो, सफल जीवन की यात्रा ईमानदारी से होगी। गुरु ने जो मंत्र दिया है उस मंत्र को अर्थसहित जपो और विश्रांतियोग में जाओ। इससे सफल जीवन के द्वार पर पहुँच जाओगे। ❐

ब्रह्मचर्य का तात्त्विक अर्थ

'ब्रह्मचर्य' शब्द बड़ा चित्ताकर्षक और पवित्र है । इसका स्थूल अर्थ तो यही प्रसिद्ध है कि अविवाहित रहना, काम-भोग न करना, स्त्रियों से दूर रहना आदि-आदि परंतु यह बहुत सीमित अर्थ है। इस अर्थ में केवल वीर्यरक्षण ही ब्रह्मचर्य है परंतु ध्यान रहे, केवल वीर्यरक्षण मात्र साधना है, मंजिल नहीं ! मनुष्य-जीवन का लक्ष्य है अपने-आपको जानना अर्थात् आत्मसाक्षात्कार करना। जिसने आत्मसाक्षात्कार कर लिया, वह जीवन्मुक्त हो गया । वह आत्मा के आनंद में, ब्रह्मानंद में विचरण करता है । उसे अब संसार से, स्वर्ग से और ईश्वर से कुछ पाना शेष नहीं रहा। उसने आनंद का स्रोत अपने भीतर ही पा लिया। अब वह आनंद के लिए किसी भी बाहरी विषय पर निर्भर नहीं है। वह पूर्ण स्वतंत्र है। उसकी क्रियाएँ सहज होती हैं। संसार के विषय उसकी आनंदमय आत्मिक स्थिति को डोलायमान नहीं कर सकते। वह संसार के तुच्छ विषयों की पोल को समझकर अपने आनंद में मस्त हो इस भूतल पर विचरण करता है। वह चाहे लँगोटी में हो चाहे कीमती वेशभूषा में, घर में रहता हो चाहे झोंपड़े में, गृहस्थी चलाता हो चाहे एकांत जंगल में विचरता हो, ऐसा महापुरुष ऊपर से भले कंगाल नजर आता हो परंतु भीतर से शहंशाह होता है क्योंकि उसकी सब वासनाएँ, सब कर्तव्य पूरे हो चुके होते हैं । सब व्यवहार करते हुए भी उसकी हर समय समाधि रहती है । उसकी समाधि सहज होती है, अखण्ड होती है । वह सदैव अपने ब्रह्मानंद में अवस्थित रहता है ।

स्थूल अर्थ में ब्रह्मचर्य का अर्थ जो वीर्यरक्षण समझा जाता है, उस अर्थ में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ व्रत है, श्रेष्ठ तप है, श्रेष्ठ साधना है और इस साधना का फल है आत्मज्ञान, आत्मसाक्षात्कार । इस फलप्राप्ति के साथ ही ब्रह्मचर्य का पूर्ण अर्थ प्रकट हो जाता है ।

जब तक किसी भी प्रकार की वासना शेष है, तब तक कोई पूर्ण ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं हो सकता । जब तक आत्मज्ञान नहीं होता तब तक पूर्ण रूप से वासना निवृत्त नहीं होती। इस वासना की निवृत्ति के लिए, अंतःकरण की शुद्धि के लिए, ईश्वर की प्राप्ति के लिए, सुखी जीवन जीने के लिए, अपने मनुष्य-जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए या कहो परमानंद की प्राप्ति के लिए... कुछ भी हो, वीर्यरक्षणरूपी साधना सदैव सब अवस्थाओं में उत्तम है, श्रेष्ठ है और आवश्यक है । वीर्यरक्षण कैसे हो, इसके लिए यहाँ हम कुछ स्थूल और सूक्ष्म उपायों की चर्चा करेंगे ।

वीर्यरक्षा के उपाय

सादा रहन-सहन बनायें

काफी लोगों को यह भ्रम है कि जीवन तड़क-भड़कवाला बनाने से वे समाज में कुछ विशेष माने जाते हैं । वस्तुतः ऐसी बात नहीं है । इससे तो केवल अपने अहंकार का ही प्रदर्शन होता है । लाल रंग के भड़कीले एवं रेशमी कपड़े मत पहनना । तेल-फुलेल और भाँति-भाँति के इत्रों का प्रयोग करने से बचना । जीवन में जितनी तड़क-भड़क बढ़ेगी, इन्द्रियाँ उतनी ही चंचल हो उठेंगी, फिर वीर्यरक्षा तो दूर की बात है ।

इतिहास पर भी हम दृष्टि डालें तो महापुरुष हमें ऐसे ही मिलेंगे, जिनका जीवन प्रारम्भ से ही सादगीपूर्ण था । सादा रहन-सहन तो बड़प्पन का द्योतक है । दूसरों को देखकर उनकी अप्राकृतिक व अधिक आवश्यकताओंवाली जीवनशैली का अनुसरण न करो । ❐

सच्चा वशीकरण मंत्र

(पूज्य बापूजी की मोक्षप्रद अमृतवाणी)

सम्राट तेग बहादुर फूलों के गमले का शौकीन था। उसने अच्छे, सुहावने, सुंदर, मधुर सुगंधवाले फूलों के पचीस गमले अपने शयनखण्ड के प्रांगण में रखवाये थे। एक आदमी को नियुक्त कर दिया था उन गमलों की देखभाल करने के लिए। दैवयोग से उस आदमी से एक गमला टूट गया। राजा को पता चला। वह सुनकर आगबबूला हो गया। नौकर बड़ा भयभीत था। वह राजा के क्रूर स्वभाव से परिचित था।

राजा ने फाँसी का हुक्म दे दिया, दो महीने की मुद्दत पर। वजीर ने राजा से अनुनय-विनय की, समझाया लेकिन राजा ने एक न मानी। नौकर के सिर पर दो माह के बाद की फाँसी नाच रही थी। अब ईश्वर के द्वार खटखटाने के सिवाय कोई चारा न रहा। वह ईश्वर की प्रार्थना में लग गया।

वहाँ राजा ने नगर में घोषणा करवा दी कि जो कोई आदमी टूटे हुए गमले की मरम्मत करके ज्यों-का-त्यों बना देगा उसे मुँहमाँगा पुरस्कार दिया जायेगा। कई लोग अपना भाग्य आजमाने के लिए आये लेकिन सब असफल रहे।

गमला टूट जाय फिर वैसे-का-वैसा कैसे बने ! देह टूट जाय फिर उसे वैसे-का-वैसा कोई कैसे बना सकता है ! ऐसा कोई डॉक्टर है जो एक बार मरीज के शरीर से प्राण निकल जायें फिर उसे वैसे-का-वैसा बना दे ! देह के दो टुकड़े हो जायें फिर उसे वैसे-का-वैसा जोड़ दे ! ऑपरेशन होने के बाद भी देह वैसी-की-वैसी नहीं रहती है। कुछ-न-कुछ कमजोरी, टाँके-टूँके के निशान या कमी रह जाती है। पतंग फट जाय तो उसको गोंद से जोड़ सकते हैं लेकिन पतंग वैसी-की-वैसी नहीं बन पाती।

वह नौकर रोजाना दिन गिनता है, मनौतियाँ मानता है कि 'हे भगवान ! हे प्रभु ! तू दया कर ! राजा का मन बदले या कुछ भी हो, मैं बच जाऊँ। हे नाथ ! रहम कर, कृपा कर...' आदि आदि।

एक महीना बीत गया तब एक संत-महात्मा नगर में पधारे। उनके कान तक यह बात पहुँची कि राजा का गमला कोई जोड़ दे तो राजा मुँहमाँगा इनाम देगा। जिस आदमी से गमला टूटा है उसको फाँसी की सजा दी गयी है।

वे संत आ गये राजदरबार में और बोले : ''राजन् ! तेरा जो गमला टूटा है उसे जोड़ने की जिम्मेदारी हम लेते हैं। बताओ, कहाँ है वह गमला ?''

राजा उन्हें उस खण्ड में ले गया जहाँ सब गमले रखे हुए थे। संत ने टूटे हुए गमले को खूब बारीकी से, सूक्ष्मता से देखा। अन्य चौबीस गमलों पर भी नजर घुमायी। राजा पर भी अपनी एक नूरानी निगाह डाल दी। महात्मा थे वे ! फिर एक डण्डा मँगवाया। नौकर ने लाकर दिया। महात्मा ने उठाया डण्डा और 'एक... दो... तीन... चार...' प्रहार करते हुए तड़ातड़ चौबीस-के-चौबीस गमले तोड़ दिये। थोड़ी देर तो राजा चकित होकर देखता रह गया कि एक गमला जोड़ने का यह नया तरीका कैसा है ! कोई नया विज्ञान होगा, महात्मा लोग जो हैं !

फिर देखा, महात्मा तो निर्भय खड़े हैं,

मस्त ! तब राजा बोला : ''अरे साधु ! यह तूने क्या किया ?''

''मैंने चौबीस आदमियों की जान बचायी है। एक गमला टूटने से एक को फाँसी लग रही है, चौबीस गमले भी ऐसे ही किसी-न-किसीके हाथ से टूटेंगे तो उन चौबीसों को भी फाँसी लगेगी। मैंने उन चौबीस आदमियों की जान बचायी है।''

राजा महात्मा की रहस्यभरी बात न समझा। उसने हुक्म दे दिया : ''इस कमबख्त को हाथी के पैरों तले कुचलवा दो।''

महात्मा भी कोई कच्ची मिट्टी के नहीं थे। उन्होंने वेद के वचनों का अनुभव किया था। शील उनके अंतःकरण का अपना खजाना था। शरीर और अंतःकरणावच्छिन्न (अंतःकरण में सीमित) चैतन्य और व्यापक चैतन्य के तादात्म्य का निजी अनुभव था। गुरु का ज्ञान उनको पच चुका था। देह क्षणभंगुर है और आत्मा अमर है, ऐसा उन्हें पता लग चुका था। किसी भी परिस्थिति में घबड़ाना, भयभीत होना, मृत्यु से डरना, ऐसी बेवकूफी उन महात्मा के अंतःकरण में नहीं थी। वे आत्मदेव में प्रतिष्ठित थे। अपने वास्तविक 'मैं' को ठीक से जानते थे और मिथ्या 'मैं' को मिथ्या मानते थे।

हाथी को लाया गया। महात्मा तो सो गये भूमि पर 'सोऽहम्... शिवोऽहम्...' का भाव रोम-रोम में भरते हुए। 'हाथी में, महावत में, राजा में, मजाक उड़ानेवालों में, सब में मैं हूँ। सोऽहम्... सर्वोऽहम्... शिवोऽहम्...। सबका कल्याण हो। सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म है, कल्याणस्वरूप है। ब्रह्म हाथी बनकर आया है। ब्रह्म महावत बनकर आया है। ब्रह्म राजा बनकर हुक्म दे रहा है और ब्रह्म ही सोया है। ब्रह्म का ब्रह्म में खिलवाड़ हो रहा है। सोऽहम्...।

ब्रह्म वजीर होकर खड़ा है। ब्रह्म सिपाही होकर भाला हाथ में लिये तैयार है। वही ब्रह्म प्रजा होकर देख रहा है, महिलाएँ होकर घूँघट से झाँक रहा है। वही ब्रह्म नन्हा-मुन्ना होकर छोटे-छोटे वस्त्र धारण करके आया है। मेरे ब्रह्म के अनेक रूप हैं और वह ब्रह्म मैं ही हूँ।' ऐसा महात्मा का चिंतन होता रहा, सर्वात्मदृष्टि बनी रही।

महावत हाथी को अंकुश मारते-मारते थक गया लेकिन हाथी महात्मा से दो कदम दूर ही खड़ा रह जाय, आगे न बढ़े। दूसरा हाथी लाया गया। दूसरा महावत बुलाया गया। उसने भी हाथी को अंकुश मारे लेकिन हाथी महात्मा से दो कदम दूर-का-दूर !

आखिर राजा भी थका। महात्मा से बोला : ''तुम गजवशीकरण मंत्र जानते हो क्या ?''

''मैं गजवशीकरण मंत्र नहीं जानता हूँ लेकिन अंतःकरण वशीकरण मंत्र जानता हूँ। मैं प्रेम का मंत्र जानता हूँ।'' यह कहकर महात्मा मुस्कराये।

कोई आपके लिए चाहे कितना भी बुरा सोचे, बुरा करने का आयोजन बनाये लेकिन आप उसके प्रति बुरा न सोचो तो उसके बाप की ताकत नहीं है कि वह आपका बुरा कर सके। मन-ही-मन भले कुढ़ता रहे लेकिन वह आपका अमंगल नहीं कर सकता क्योंकि आप उसका मंगल चाहते हो।

महात्मा ने कहा : ''राजन् ! मैं जब सीधा लेट गया तो हाथी में, तुममें और मुझमें एक ही प्रभु बस रहा है, ऐसा सोचकर उस सर्वसत्ताधीश को प्यार करते हुए मैंने तुम्हारा और हाथी का परम हितचिंतन किया। हाथी में मेरा परमात्मा है और तुममें भी मेरा परमात्मा है, चाहे तुम्हारी बुद्धि उसे स्वीकारे या न स्वीकारे। मैंने तुम्हारा भी कल्याण चाहा और महावत व हाथी का भी कल्याण चाहा।'' राजा का सिर शर्म से नीचे झुक गया।

महात्मा बोले : ''अगर मैं तुम्हारा बुरा

चाहता तो तुम्हारी बुराई और जोर पकड़ती । तुमसे ईर्ष्या करता तो तुम्हारी ईर्ष्या और जोर पकड़ती । तुम्हारे प्रति गहराई में घृणा करता तो तुममें घृणा और जोर पकड़ती । हे मित्र ! मेरे चित्त में तुम्हारे लिए ईर्ष्या और घृणा की जगह नहीं है, क्योंकि घृणा और ईर्ष्या करके मैं अपना अंतःकरण अपवित्र क्यों करूँ ?''

जब हम किसीके लिए ईर्ष्या व घृणा करते हैं तो वह आदमी तो सोफे पर मजे से बैठा है अपने घर में, पंखे के नीचे हवा खा रहा है या झूले पर मजे से झूल रहा है और हम घृणा करके अपना अंतःकरण मलिन करते हैं । जिसकी हम निंदा करते हैं वह मेवे-मिठाई खा रहा है, आनंद-उल्लास में है और हम निंदा करके अपने दिल में होली जला रहे हैं, कितनी नासमझी की बात है !

महात्मा आगे कहने लगे : ''हे राजन् ! हमारी नासमझी गुरुदेव की कृपा से छूट गयी है । इसीलिए महावत के अंकुश लगने पर भी हाथी मुझ पर पैर नहीं रख सका । अगर शरीर का प्रारब्ध-वेग ऐसा होगा तो इस प्रकार ही मौत होकर रहेगी, इसमें क्या बड़ी बात है ! तब तुम रक्षा करने बैठोगे तो भी यह शरीर नहीं जियेगा । प्रारब्ध में ऐसी मौत नहीं है तो तुम्हारे जैसे दस राजा नाराज हो जायें तो भी बिगड़-बिगड़कर क्या बिगड़ेगा ! राजी भी हो गये तो बन-बनकर क्या होगा ! जो काम मुझे बनाना था वह मैंने बना लिया है ।

राजन् ! देह तो क्षणभंगुर है । यह अमर हो नहीं सकती । जब यह देह अमर नहीं तो मिट्टी के गमले अमर कैसे रह सकते हैं ? ये तो फूटेंगे, गलेंगे, मिटेंगे । पौधा भी सूखेगा । गलने, सड़ने, मरनेवाले गमले के लिए तू बेचारे एक गरीब नौकर के प्राण ले रहा है । इसलिए मैंने डण्डा घुमाकर तुझे ज्ञान दे दिया कि ये तो मरनेवाली चीजें हैं । तू अपने अंतःकरण का निर्माण कर । अंतःकरण का विनाश मत कर । मिटनेवाली चीजों के साथ इतनी मुहब्बत करके तू अपने अंतःकरण को बिगाड़ मत । बिगड़नेवाली चीजों में ममता बढ़ाकर तू शील का त्याग मत कर । क्षमा, शौच (शुद्धि), अस्तेय (चोरी न करना), जितेन्द्रियता, परदुःखकातरता - ये सब शील के अंतर्गत आते हैं, दैवी सम्पत्ति के अंतर्गत आते हैं ।''

राजा के चित्त पर महात्मा के शब्दों का प्रभाव पड़ा । वह सिंहासन से नीचे उतरा । हाथ जोड़कर क्षमा माँगी । नौकर की फाँसी का हुक्म वापस ले लिया और उसे आश्वासन दिया । फिर महात्मा से गुरुमंत्र लिया और मायिक पदार्थों से ममता हटाकर शाश्वत सत्य को पाने के लिए उस आत्मवेत्ता महापुरुष के बताये मार्ग पर चल पड़ा ।

ईश्वरप्राप्ति की इच्छा से आधी साधना सम्पन्न हो जाती है, तमाम दोष दूर होने लगते हैं । जगत के भोग पाने की इच्छामात्र से आधी साधना नष्ट हो जाती है । 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' में कहा गया है : ''जितनी-जितनी इच्छा बढ़ती है उतना-उतना जीव छोटा होता जाता है, लघु होता जाता है । वह इच्छाओं का, तृष्णाओं का जितना त्याग करता है उतना-उतना महान होता जाता है ।''

संसार के सुखों को पाने की इच्छा दोष ले आती है और आत्मसुख पाने की इच्छा सद्गुण ले आती है । ऐसा कोई दुर्गुण नहीं जो संसार के भोग की इच्छा से पैदा न हो । आदमी कितना भी अक्लमंद हो, बुद्धिमान हो, सब जानता भी हो लेकिन भोग की इच्छा दुर्गुण ले आयेगी । आदमी चाहे कितना भी अनजान हो, बुद्धू हो लेकिन ईश्वर को पाने की इच्छा है तो वह उसमें सद्गुण ले आयेगी ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः) ❐

जीवन-संजीवनी

- श्री परमहंस अवतारजी महाराज

✻ पूर्ण संत सद्गुरु की शरण ग्रहण करना तथा आज्ञा मानना ही मुक्ति प्राप्त करने का सरल साधन है।

✻ वाद-विवाद से कुछ भी प्राप्त नहीं होता, उसमें पड़कर जीवन के अमूल्य समय को व्यर्थ न गँवाओ बल्कि सद्गुरु के वचनों पर चलकर समय को सार्थक करो।

✻ यदि कोई पूछे कि सच्चे गुरु कैसे मिलेंगे तो इसका उत्तर यही है कि सच्ची लगन से। यदि उनके संयोग में विलम्ब हो रहा है तो अभी लगन पूरी नहीं। लगन हो और प्रियतम न मिलें, ऐसा कदापि नहीं हो सकता।

✻ सच्चे गुरु के दरबार की यह विशेषता है कि विकारी मनुष्य भी अधिकारी बनकर अपना जन्म सँवार लेते हैं।

✻ प्रेमी और विश्वासी पूर्ण सद्गुरु के दर्शन प्रत्येक वस्तु में करता है। यदि कोई कहे कि मुझे भी ऐसे ही दर्शन हों तभी मैं मानूँ तो यह बात उसकी अपनी लगन और सद्गुरु की प्रसन्नता पर निर्भर करती है।

✻ भक्ति में गरीबी और अमीरी कोई महत्त्व नहीं रखतीं। भगवान तो मन की भावना देखते हैं। जिसने भी भगवान को पाया, केवल सच्चे प्रेम से ही पाया।

✻ भगवान के प्रेमी शारीरिक दुःखों से नहीं घबराते। धैर्य, शांति और नाम-सुमिरन उनके स्वभाव में होता है।

✻ भगवत्प्रेमियों को कष्टों से बचाना तो भगवान का स्वभाव ही है।

✻ परमात्मा की मौज में हस्तक्षेप न करो और न ही अपनी चलाओ। जो उन्हें अच्छा लगे वह सत्य मानकर शिरोधार्य करो।

✻ संसार में सबसे सुखदायी और सरल काम है - नाम-सुमिरन, क्योंकि वह चलते-फिरते, उठते-बैठते और सोये हुए भी हो सकता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि इसमें लाभ भी अन्य कार्यों से अधिक है फिर भी आम लोग इस कार्य में प्रमाद करते हैं।

✻ सब तीर्थ करने व व्रत रखने की अपेक्षा गुरुमुख बनकर नाम-सुमिरन करना उत्तम है।

✻ रूहानी कमाई (आत्मिक लाभ) करनेवाले में राग-द्वेष नहीं होता। जहाँ राग-द्वेष होगा वहाँ रूहानियत (आध्यात्मिकता) नहीं होगी।

✻ सच्चा धर्म तो यह है कि आत्मा पर जो मोह-माया की मैल का आवरण चढ़ चुका है, उसे नाम की कमाई से धोकर आत्मा और परमात्मा के एकत्व का अनुभव करना है। शेष उन्नति तो धर्म की छाया मात्र है।

✻ तुम सच्चे मन से यदि गुरुमंत्र एवं गुरुवचनों का अभ्यास करोगे तो समस्त बंधन टूट जायेंगे और जीवन्मुक्त हो जाओगे।

✻ संतों की वाणी केवल पढ़ो नहीं अपितु पढ़ते-पढ़ते शांत हो जाओ, जीभ तालू में लगाओ और अमल करने का भाव दोहराओ तो अनुभव खुल जायेगा और स्वयं को परिवर्तित रूप में देखोगे अर्थात् दुखिया से सुखिया, भूखे से तृप्त तथा अशांत से शांत हो जाओगे। जन्मने-मरनेवाले तुच्छ जीव से अपने को ब्रह्मस्वरूप में पाओगे।

✻ जैसे तुम अपनी आँखों से देख सकते हो, कानों से सुन सकते हो और मुख से बोल सकते हो वैसे ही आत्मिक अनुभव भी जागृत करो, तब तो तुमने कुछ प्राप्त भी किया। महापुरुषों के अनुभव का लाभ तो तभी होगा जब उनकी वाणी पढ़-सुनकर उस पर अमल किया जाय। ❐

निर्जला एकादशी

(निर्जला एकादशी : १२ जून २०११)

युधिष्ठिर ने कहा : जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष में जो एकादशी आती हो, कृपया उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! उसका वर्णन परम धर्मात्मा सत्यवतीनंदन व्यासजी करेंगे, क्योंकि ये सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वज्ञ और वेद-वेदांगों के पारंगत विद्वान हैं ।

तब वेदव्यासजी कहने लगे : दोनों ही पक्षों की एकादशियों के दिन मनुष्य भोजन न करें । द्वादशी के दिन स्नान आदि से पवित्र हो फूलों से भगवान केशव की पूजा करें । फिर नित्यकर्म समाप्त होने के पश्चात् पहले ब्राह्मणों को भोजन देकर अंत में स्वयं भोजन करें। राजन् ! जननाशौच और मरणाशौच में भी एकादशी को भोजन नहीं करना चाहिए ।

भीमसेन बोले : परम बुद्धिमान पितामह ! मेरी उत्तम बात सुनिये । राजा युधिष्ठिर, माता कुंती, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव - ये एकादशी को कभी भोजन नहीं करते तथा मुझसे भी हमेशा यही कहते हैं कि 'भीमसेन ! तुम भी एकादशी को न खाया करो ।' किंतु मैं उन लोगों से यही कहता हूँ कि मुझसे भूख नहीं सही जायेगी ।

भीमसेन की बात सुनकर व्यासजी ने कहा : यदि तुम्हें स्वर्गलोक की प्राप्ति अभीष्ट है और नरक को दूषित समझते हो तो दोनों पक्षों की एकादशियों के दिन भोजन न करना ।

भीमसेन बोले : महाबुद्धिमान पितामह ! मैं आपके सामने सच्ची बात कहता हूँ । एक बार भोजन करके भी मुझसे व्रत नहीं किया जा सकता, फिर उपवास करके एकदम निराहार तो मैं रह ही कैसे सकता हूँ ! मेरे उदर में वृक नामक अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है, अतः जब मैं बहुत अधिक खाता हूँ, तभी यह शांत होती है । इसलिए महामुने ! मैं वर्ष भर में केवल एक ही उपवास कर सकता हूँ। जिससे स्वर्ग की प्राप्ति सुलभ हो तथा मैं कल्याण का भागी हो सकूँ, ऐसा कोई एक व्रत निश्चय करके बताइये । मैं उसका यथोचित रूप से पालन करूँगा ।

व्यासजी ने कहा : भीम ! ज्येष्ठ मास में सूर्य वृषभ राशि पर हो या मिथुन राशि पर, शुक्लपक्ष में जो एकादशी हो, उसका यत्नपूर्वक निर्जल व्रत करो । केवल कुल्ला या आचमन करने के लिए मुख में जल डाल सकते हो, उसको छोड़कर किसी प्रकार का जल विद्वान पुरुष मुख में न डाले, अन्यथा व्रत भंग हो जाता है। एकादशी को सूर्योदय से लेकर दूसरे दिन के सूर्योदय तक मनुष्य जल का त्याग करे तो यह व्रत पूर्ण होता है। तदनंतर द्वादशी को प्रभातकाल में स्नान करके ब्राह्मणों को विधिपूर्वक जल और सुवर्ण का दान करे । इस प्रकार सब कार्य पूरे करके जितेन्द्रिय पुरुष ब्राह्मणों के साथ भोजन करे । वर्ष भर में जितनी एकादशियाँ होती हैं, उन सबका फल निर्जला एकादशी के सेवन से मनुष्य प्राप्त कर लेता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है । शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान केशव ने मुझसे कहा था कि 'यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और एकादशी को निराहार रहे तो वह सब पापों से छूट जाता है ।'

एकादशी व्रत करनेवाले पुरुष के पास विशालकाय, विकराल आकृति और काले रंगवाले

दंड-पाशधारी भयंकर यमदूत नहीं जाते। अंतकाल में पीताम्बरधारी, सौम्य स्वभाववाले, हाथ में सुदर्शन चक्र धारण करनेवाले और मन के समान वेगशाली विष्णुदूत उस वैष्णव पुरुष को भगवान विष्णु के धाम में ले जाते हैं। अतः निर्जला एकादशी को पूर्ण यत्न करके उपवास और श्रीहरि का पूजन करो । स्त्री हो या पुरुष, यदि उसने मेरु पर्वत के बराबर भी महान पाप किया हो तो वह सब इस एकादशी व्रत के प्रभाव से भस्म हो जाता है। जो मनुष्य उस दिन जल के नियम का पालन करता है, वह पुण्य का भागी होता है । उसे एक-एक प्रहर में कोटि-कोटि स्वर्णमुद्राएँ दान करने का फल प्राप्त होता सुना गया है । 'मनुष्य 'निर्जला एकादशी' के दिन स्नान, दान, जप, होम आदि जो कुछ भी करता है, वह सब अक्षय होता है।' यह भगवान श्रीकृष्ण का कथन है । 'निर्जला एकादशी' को विधिपूर्वक उत्तम रीति से उपवास करके मानव वैष्णव पद को प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य एकादशी के दिन अन्न खाता है, वह पाप का भोजन करता है । इस लोक में वह चांडाल के समान है और मरने पर दुर्गति को प्राप्त होता है।

जो ज्येष्ठ के शुक्ल पक्ष में एकादशी को उपवास करके दान करेंगे, वे परम पद को प्राप्त होंगे । जिन्होंने एकादशी को उपवास किया है, वे ब्रह्महत्यारे, शराबी, चोर तथा गुरुद्रोही होने पर भी सब पातकों से मुक्त हो जाते हैं ।

कुंतीनंदन ! 'निर्जला एकादशी' के दिन श्रद्धालु स्त्री-पुरुषों के लिए जो विशेष दान और कर्तव्य विहित हैं, उन्हें सुनो : उस दिन जल में शयन करनेवाले भगवान विष्णु का पूजन और धेनु का दान उचित है । पर्याप्त दक्षिणा और भाँति-भाँति के मिष्टान्नों द्वारा यत्नपूर्वक ब्राह्मणों को संतुष्ट करना चाहिए। ऐसा करने से ब्राह्मण अवश्य संतुष्ट होते हैं और उनके संतुष्ट होने पर श्रीहरि मोक्ष प्रदान करते हैं । जिन्होंने शम, दम और दान में प्रवृत्त हो श्रीहरि की पूजा तथा रात्रि में जागरण करते हुए इस 'निर्जला एकादशी' का व्रत किया है, उन्होंने अपने साथ ही बीती हुई सौ पीढ़ियों को व आनेवाली सौ पीढ़ियों को भगवान वासुदेव के परम धाम में पहुँचा दिया है । 'निर्जला एकादशी' के दिन अन्न, वस्त्र, गौ, जल, शय्या, सुंदर आसन, कमंडलु तथा छाता दान करना चाहिए । जो श्रेष्ठ तथा सुपात्र ब्राह्मण को जूता दान करता है, वह सोने के विमान पर बैठकर स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है । जो इस एकादशी की महिमा को भक्तिपूर्वक सुनता अथवा उसका वर्णन करता है, वह स्वर्गलोक में जाता है। चतुर्दशीयुक्त अमावस्या को सूर्यग्रहण के समय श्राद्ध करके मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है, वही फल इसके श्रवण से भी प्राप्त होता है। पहले दंतधावन करके यह नियम लेना चाहिए कि 'मैं भगवान केशव की प्रसन्नता के लिए एकादशी को निराहार रहकर आचमन के सिवा दूसरे जल का भी त्याग करूँगा ।' द्वादशी को देवेश्वर भगवान विष्णु का पूजन करना चाहिए । गंध, धूप, पुष्प और सुंदर वस्त्र से विधिपूर्वक पूजन करके जल के घड़े के दान का संकल्प करते हुए निम्नांकित मंत्र का उच्चारण करे :

देवदेव हृषीकेश संसारार्णवतारक ।
उदकुम्भप्रदानेन नय मां परमां गतिम् ॥

'संसारसागर से तारनेवाले हे देवदेव हृषीकेश ! इस जल के घड़े का दान करने से आप मुझे परम गति की प्राप्ति कराइये।'

(पद्म पु., उ. खंड : ५३.६०)

भीमसेन ! 'निर्जला एकादशी' के दिन श्रेष्ठ ब्राह्मणों को शक्कर के साथ जल के घड़े का दान करना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य भगवान विष्णु के समीप पहुँचकर आनंद का अनुभव करता है। तत्पश्चात् द्वादशी को ब्राह्मण-भोजन कराने के बाद स्वयं भोजन करे। जो इस प्रकार पूर्ण रूप से इस पापनाशिनी एकादशी का **(शेष पृष्ठ १९ पर)**

उद्यमः साहसं... आदि से पग-पग पर परमात्म-सहायता और आनंद का अनुभव करो

धैर्यशील व्यक्ति का मस्तिष्क सदा शांत रहता है । उसकी बुद्धि सदा ठिकाने पर रहती है । उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम इन दैवी गुणों से युक्त व्यक्ति आपदाओं और विफलताओं से भय नहीं खाता । अपने को मजबूत बनाने के लिए वह अनेकों उपाय खोज निकालता है ।

उपरोक्त छः गुण सात्त्विक गुण हैं । जब तक इनका सम्पादन न कर लिया जाय, तब तक लौकिक या पारमार्थिक सफलता नहीं मिल सकती । इन गुणों का सम्पादन कर लेने पर संकल्पशक्ति का उपार्जन किया जा सकता है । पग-पग पर कठिनाइयाँ आ उपस्थित होती हैं किंतु धैर्यपूर्वक उनका सामना कर उद्योग में लगे रहना चाहिए । महात्मा गांधी की सफलता का मूल मंत्र यही था । यही कारण था कि वे अपने ध्येय में सफलता प्राप्त कर सके । वे कभी हताश नहीं होते थे । संसार के महापुरुष इन गुणों के बल पर ही अपने जीवन में सफलता प्राप्त कर पाये । तुम्हें भी इन गुणों का सम्पादन करना होगा ।

एकाग्रता (धारणा) के अभ्यास में सफलता प्राप्त करने के लिए धैर्य की महान आवश्यकता है । ॐकार का दीर्घ गुंजन और भगवान या सद्गुरु के श्रीचित्र को एकटक निहारना आरोग्य, धैर्य और संकल्पशक्ति विकसित करने का अनुपम साधन है । विद्युत-कुचालक आसन अवश्य बिछायें । १०-१५ मिनट से आरम्भ करके थोड़ा-थोड़ा बढ़ाते जायें । बाहर की व्यर्थ चेष्टाओं में, व्यर्थ चिंतन में दुर्लभ समय व्यर्थ न होने पाये । बहुत-से व्यक्ति ऐसे हैं जो कुछ कठिनाइयों के आ जाने से काम छोड़ देते हैं, उनमें धैर्य और उद्योगशील स्वभाव की कमी है । ऐसा नहीं होना चाहिए । जरा-जरा बात में काम छोड़ देना उचित नहीं है ।

चींटियाँ कितनी उद्यमी होती हैं ! चीनी और चावल के दाने भर-भर के अपने गोदामों में जमा कर रखती हैं । कितने धैर्य और उद्यम की आवश्यकता है एक-एक कर चावल के दानों और चीनी को ले जा के जमा करने के लिए !

मधुमक्खियाँ भी प्रत्येक फूल से शहद एकत्र कर छत्ते में जमा करती हैं, कितना धैर्य और उद्यमी स्वभाव चाहिए इसके लिए ! बड़ी-बड़ी नदियों पर बाँधों का निर्माण करानेवाले, पुल बाँधनेवाले इंजीनियरों के धैर्य की प्रशंसा क्यों न की जाय ! कितना धैर्यशील और उद्यमपरायण होगा वह वैज्ञानिक जिसने हीरे के सही रूप (आण्विक संरचना) को पहचाना !

धैर्यशील व्यक्ति अपने क्रोध को सिर नहीं उठाने देता । अपने क्रोधी स्वभाव पर विजय पाने के लिए धैर्य एक समर्थ और सबल शस्त्र है । धैर्य के अभ्यास से व्यक्ति को आंतरिक शक्ति का अनुभव होता है । अपने दिन भर के कार्यों को धैर्यपूर्वक करने से आनंद, शांति और संतोष का अनुभव होता है । धीरे-धीरे इस गुण को अपने अंदर विकसित करो । इस गुण के विकास के लिए सदा उत्कण्ठित रहो । मन में सदा धैर्य की मानसिक मूर्ति बसी हुई रहनी चाहिए । मन में निरंतर विचार रहा तो समय आने पर धैर्य स्वयं ही प्रत्यक्ष होने लग जायेगा । नित्यप्रति प्रातःकाल

उठते ही उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम इन दैवी गुणों का विकास करने का संकल्प करो । प्रतिदिन इस क्रम को दुहराते जाओगे तो असफलता के बावजूद भी एक-न-एक दिन सफल होओगे । पग-पग पर परमात्मसत्ता, चेतना तुम्हारे स्वभाव में सहज में प्रकट होने लगेगी । सच्चे महापुरुषों के सद्गुण तुम्हारे अंदर खिलने लगेंगे । इन गुणों के सिवाय और चालबाजी करके सत्ता व सम्पदा हासिल कर भी ली तो पाकिस्तान के भूतपूर्व राष्ट्रपति मुशर्रफ और मिश्र के राष्ट्रपति मुबारक की गति जगजाहिर है । मृत्यु के बाद किन-किन योनियों की परेशानियाँ भुगतनी पड़ेंगी उसका अंदाज नहीं लगाया जा सकता । अतः शास्त्रों के द्वारा बताये गये उद्यम, साहस, धैर्य आदि सद्गुणों को विकसित करो । पग-पग पर परमात्मसत्ता की स्फुरणा, सहायता और एकत्व के आनंद का एहसास करो । सच्ची उन्नति आत्मवेत्ता जानते हैं, उसको जानो और आकर्षणों से बचो ।

किसी भी बात की शिकायत नहीं करनी चाहिए । मन को चिड़चिड़ेपन से मुक्त रखना चाहिए । सोचो कि इन गुणों को धारण करने से क्या-क्या लाभ होंगे और तुम किन-किन व्यवसायों में इन गुणों का सहारा लोगे । इनका सहारा लेकर परम सफलता को वरण करने का संकल्प करो । ॐ उद्यम... ॐ साहस... ॐ आरोग्य... ❐

(पृष्ठ १७ से 'निर्जला एकादशी' का शेष)

व्रत करता है, वह सब पापों से मुक्त हो अनामय (रोगरहित) पद को प्राप्त होता है । यह सुनकर भीमसेन ने भी इस शुभ एकादशी का व्रत आरम्भ कर दिया । **(पद्म पुराण, उ. खंड)**

रोग-शोक, पाप से रहित आनंददायी जीवन का अनुभव करो ।

सावधानी : मधुप्रमेह (डायबिटीज) वाले, वृद्ध और कमजोर व्यक्ति निर्जला व्रत करने का दुराग्रह न करें । ❐

एक अद्भुत इलाज

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

सुदर्शन सिंह 'चक्र' अखंडानंदजी के मित्र थे । अखंडानंदजी और उड़िया बाबा ये समकालीन संत हो गये । इंदिरा गांधी की गुरु आनंदमयी माँ भी उड़िया बाबा का आदर करती थीं । सुदर्शन सिंह 'चक्र' के लेख गीता प्रेस की पुस्तकों में छपते थे । वे एक अनोखे संत थे । उनके पास जो ग्रामीण लोग आते थे उनको वे आयुर्वेदिक इलाज बता देते थे । स्वार्थ नहीं था तो उनके बताये हुए इलाज से कइयों को आराम मिल जाता था । वे यात्रा करते हुए एक गाँव में पहुँचे । उस गाँव के ठाकुर साहब मतलब गाँव के मुख्य व्यक्ति आये और बोले : ''बाबा ! मुझे शौच के मार्ग से खून आता है और खूब जलन होती है । मैंने सारे हकीम, डॉक्टरों को दिखा लिया और उनकी सारी दवाइयाँ, सारे उपचार करके देख लिये हैं । कोई इलाज काम नहीं करता ।''

सुदर्शन सिंह 'चक्र' थोड़ी देर शांत हो गये, फिर बोले : ''ठाकुर साहब ! क्या आपने कभी किसीको सताया है, तपाया है ?''

साथी बोल पड़े : ''हमारे ठाकुर साहब बहुत भले आदमी हैं, इन्होंने किसीको नहीं सताया, किसीको नहीं तपाया ।''

बाबा फिर शांत हुए और बोले : ''क्या आपने किसीका हक छीना या दबाया है जिससे उसका दिल जलता हो ? जरा याद करो । कोई इलाज काम नहीं करता तो यह पाप का प्रभाव है, इसीलिए

रोग नहीं मिटता। एक तो वात-पित्त-कफ के दोष से, प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने से रोग होता है और दूसरा पाप के प्रभाव से भी रोग होता है। पाप के कारण जो रोग होता है वह आसानी से नहीं मिटता है।''

ठाकुर साहब थोड़ा सोचकर बोले : ''मेरी एक विधवा भाभी है। वह मायके में रहती है और हक माँगती है लेकिन उसको कुछ दे दूँगा तो वह अपने भाइयों को दे देगी, इसलिए मैंने उसको कुछ नहीं दिया।''

बाबा बोले : ''ठाकुर साहब ! यदि आपको ठीक होना है तो हर महीने उसको सौ रुपये का मनीऑर्डर भेजिये।''

सौ रुपये में जब परिवार पलते थे उस जमाने की बात है। सन् १९६० में भी सौ रुपये में पूरे परिवार का गुजारा होता था। सौ रुपया भेजने का आदेश सुनकर वे चले गये। कुछ दिनों के बाद बाबा के पास आये और बोले : ''बाबा ! मेरा रोग ७५ प्रतिशत मिट गया है, आराम हो गया है। २५ प्रतिशत अभी बाकी है, उसके लिए आप थोड़ी दवाई दे दीजिये।''

बाबा बोले : ''२५ प्रतिशत बाकी कैसे रह गया ? तुम कितना पैसा भेजते हो ? सौ रुपया भेजते हो ?''

''नहीं। वह अकेली है। उसका २५ रुपये में गुजारा हो जाता है, सौ रुपये क्या करेगी ?''

''इसीलिए रोग टिका है। वह क्या करेगी यह सोचना तुम्हारा काम नहीं है। तुम्हारा कर्तव्य है पैसे देना। घर में होती तो तुम्हारे ठाट-बाट के जीवन में उसका सौ रुपया खर्च हो जाता। वह विधवा है इसलिए तो वहाँ रह रही है। गरीब इलाके में रहती है तो कम खर्च है, ऐसा करके उसको तपाओगे तो फिर यह बीमारी चालू रहेगी।''

ठाकुर साहब दुबारा तो नहीं आये लेकिन सुदर्शन सिंह ने जाँच करायी तो पता चला कि उन्होंने ठीक से पैसे भेजे और ठीक भी हो गये।

यदि कभी किसीको कोई रोग हो और दवाइयों से ठीक न हो तो शांत होकर बैठना। सोचना कि 'मैंने किसीका हक तो नहीं दबाया ? किसीका दिल तो नहीं जलाया ?' दवाई करने पर भी रोग, पीड़ा नहीं मिटती है तो मान लेना कि किसी-न-किसीको सताया है, किसी-न-किसीका हक छीना है, किसी-न-किसीको बिनजरूरी दुःख दिया है। भले ही वह बेचारा तुम्हारे साथ टक्कर लेने की क्षमता न रखता हो लेकिन उसके दिल की आह तो तुम्हें रोग के रूप में भुगतनी पड़ सकती है। खोज लीजिये और उस भूल को सुधारिये। इससे डॉक्टरों, हकीमों को अथवा आपको अपने-आप ही रोग भगाने की अक्ल स्फुरित हो जायेगी और आप निरोग तन रह सकते हैं, निरोग मन रह सकते हैं।

मेरे पिताजी संसार से विदा लेते समय मेरी माँ के आगे हाथ जोड़कर बोले : ''कभी मैंने तुझको कुछ भला-बुरा कह दिया होगा, कभी हाथ भी उठ गया होगा, उसके लिए तू मुझे माफ कर देगी तो ठीक होगा, नहीं तो मुझे फिर भोगना पड़ेगा। किसी जन्म में आकर तेरी डाँट-फटकार और पिटाई मुझे सहन करनी पड़ेगी।''

मेरी माँ ने कहा : ''अच्छा तो मुझसे भी तो कोई गलती हुई होगी, आप माफ कर दो।''

बोले : ''हाँ-हाँ, मैंने माफ कर दिया।''

आप भी साल में एक बार आपस में पति-पत्नी, भाई-भाई, मित्र-मित्र लेखा चुकता करा लिया करो, जिससे दुबारा कर्मबंधन में पड़कर आना न पड़े।

आप अपनी बुद्धि निरोग बना लो ताकि बाहर सुख ढूँढ़ते हुए भटकना नहीं पड़े। निरोग बुद्धि अंतरात्मा में सुखी रहती है। अगर भगवान की अनुभूति करनी हो, दुःखों से बचना हो तो किसी प्राणी के प्रति द्वेष न रखो।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां... ❐

नश्वर लुटाया, शाश्वत पाया

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

स्वामी विवेकानंदजी के बाल्यकाल की बात है। तब उनका नाम नरेन्द्र था। जब भी कोई गरीब-गुरबा या भिखारी आकर उनसे कुछ माँगता तो अपने पुराने संस्कार के कारण जो भी सामान मिलता वह दे डालते थे। घर में रुपया-पैसा या और कुछ नहीं मिलता तो बर्तन ही उठाकर दे देते। बर्तन हाथ न लगे तो किसीका भी कपड़ा उठाकर दे देते।

एक दिन कोई माँगनेवाला आया तो उस समय इनके पास कुछ भी नहीं था। माँ को पता था कि ये भाईसाहब किसीको कुछ भी उठाकर दे देंगे इसलिए सब संदूक नीचे के कमरे में बंद कर दिये थे। घर में और कुछ मिला नहीं तो नरेन्द्र ने क्या किया कि बाहर चले गये और माँगनेवाले को अपने कपड़े उतारकर दे दिये। एकदम बबलू की तरह (नंगे होकर) आ गये, बबलू तो थे ही। माँ ने प्यार भरे गुस्से से डाँटते हुए कहा : ''मेरा बेटा नंगा ! ९-१० साल का, इतना बड़ा बैल जैसा और नंगा होकर आया ! कपड़े कहाँ गये ?''

बोले : ''वह माँग रहा था...। बेचारे को पहनने को नहीं थे, उसके बच्चों के लिए दे दिये।''

माँ ने कहा : ''चल।'' हाथ पकड़कर ले गयी, ऊपर के कमरे में बंद कर बाहर से ताला मार दिया और बोली : ''तू सुधरेगा नहीं ! अब मैं तुझे खोलूँगी ही नहीं, तब पता चलेगा।''

माँ तो चली गयी। ये भाईसाहब बैठे रहे। माँगनेवाले ने देखा कि अपने दाता ऊपर हैं, दाता ने भी देख लिया माँगनेवाले को।

''बालक दाता ! तुम्हारी जय हो ! कुछ मिल जाय।'' दाता ने देखा कि अब तो कुछ है ही नहीं। इधर-उधर देखा तो माँ का संदूक पड़ा था। 'माँ ताला लगाना भूल गयी है। वाह प्रभु ! तेरी कितनी कृपा है !' संदूक खोला तो माँ की रेशमी साड़ियाँ पड़ी थीं। उठाकर खिड़की से माँगनेवाले के फैले हाथों पर फेंक दीं। दाता आह्लादित हो गये और माँगनेवाला निहाल हो गया। 'प्रभु की जय हो ! दाता की जय हो !!' माँ ने 'जय हो, जय हो' सुना तो सोचा, 'इसने फिर क्या तूफान मचाया है !' बाहर आकर देखा तो...

''अरे, किसने दी ये मेरी साड़ियाँ ?''

भिखारी बोला : ''आपके दाता बेटे ने ऊपर से फेंकी हैं।'' माँ ने खिड़की की ओर देखा तो याद आया कि 'ओहो ! संदूक खुला रह गया था।' माँ को तो गुस्सा आना चाहिए था लेकिन धड़ाक-से दरवाजा खोला और प्यार करते हुए बोली : ''बेटा ! तू सब कुछ लुटाये बिना नहीं रहेगा, तू ऐसा है। अब तुझे कौन समझाये ! तू तो ऐसा है मेरा बिटुआ !'' जिसने सब लुटाया उसका सारा ब्रह्माण्ड अपना हो गया।

हमको भी कई बार ऐसा होता था और कई बार लुटाया भी। एक बार तो ऐसा लुटाया कि चटाई तक दे डाली थी। धोती और कुर्ता भी दे दिया था, एक कच्छे में चल दिये। जो सब कुछ सर्वेश्वर का मानकर सर्वेश्वर के निमित्त बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय उसका सदुपयोग कर लेता है, उसके लिए सर्वेश्वर दूर नहीं, दुर्लभ नहीं, परे नहीं, पराये नहीं। इसका मतलब यह भी नहीं कि तुम किसीको गहने दे दो या कपड़े दे दो लेकिन उनमें ममता न रखो। ये चीजें पहले तुम्हारी नहीं थीं, बाद में नहीं रहेंगी, इनका सदुपयोग कर लो, यथायोग्य अधिकारी के अनुसार देते चलो। शरीर को अपना न मानो, इसे 'मैं' न मानो। जैसे दूसरे का शरीर हो, ऐसे ही अपने शरीर को सँभालो। व्यवहार चलाने के लिए खाओ-पियो, शरीर को ढको लेकिन मजा लेने के लिए नहीं। मजा लेना है तो परमात्म-ज्ञान, परमात्म-शांति में गोता मारो। ❐

विद्यार्थी-जीवन में महत्त्वपूर्ण बातें

– संत पथिकजी महाराज

✻ विद्याप्राप्ति के लिए बुद्धि को बलवती बनाना चाहते हो तो इच्छाओं की पूर्ति का पक्ष न लो ।

✻ जितना ही इन्द्रियों के विषयसेवन में व्यय होनेवाली शक्ति को रोकते रहोगे, उतनी ही अधिक बुद्धि शक्तिशाली होगी ।

✻ अधिक बोलना, अधिक सोना, अधिक घूमते रहना, मूल्यवान सुंदर वस्त्रों तथा आभूषणों से शरीर को सजाते रहना, अधिक स्वादिष्ट, गरिष्ठ भोजन करना, अपने को धनी मानकर गर्व करना, अपने को निर्धन मानकर खिन्न-दुःखी रहना, राजनैतिक कार्यों में या ऐसे किसी दल का सदस्य बनकर भाग लेना - ये सब बातें विद्यार्थी के अध्ययन में बाधक होती हैं । इनसे शक्ति, समय का अपव्यय होता है ।

✻ विद्यार्थी को शरीर से कुछ श्रम (आसन, व्यायाम, दौड़ना, शारीरिक श्रमवाली सेवा आदि) अवश्य करना चाहिए ।

✻ दीन, दुःखी, निर्बल की सेवा-सहायता का अवसर सामने आने पर अपनी शक्ति के अनुसार सहायता अवश्य देनी चाहिए । अपनी आवश्यकता बहुत कम रखनी चाहिए ।

✻ विद्यार्थी को प्रारम्भ से ही धैर्य धारण करने का, नम्र होकर रहने तथा मधुरभाषी, मितभाषी, संतोषी होने का एवं कष्ट-सहिष्णुता का अभ्यास बढ़ा लेना चाहिए ।

✻ वे विद्यार्थी जो स्वभाव से ही परिश्रमी, संयमी, उदार, कर्तव्यपरायण, दयावान, विनम्र, गम्भीर, विचारशील, दूरदर्शी होते हैं, वे ही समाज तथा देश की विश्वसनीय सम्पत्ति हैं । वे ही कुछ ऊँचे काम कर पाते हैं ।

✻ जिस जीवन का आरम्भ सुंदर, शुभ, विधिवत् एवं शक्तिसम्पन्न होता है, उसीका मध्य और अंत भी सुख-शांति से पूर्ण हो सकता है । शरीर में संयम के द्वारा पर्याप्त शक्ति संचित होने के पहले ही जो युवक भोगी-विलासी बन जाते हैं, वे अभागे जीवन में कुछ ऊँचा कार्य नहीं कर पाते ।

✻ विद्याध्ययन करते हुए आदर्श, विवेक, सारावलोकनी बुद्धि, दूरदर्शी दृष्टि एवं अपने-आपका तथा संसार का ज्ञान प्राप्त करने के पहले जो युवक अधिकार एवं सम्मान-लाभ की सिद्धि के लिए दौड़ पड़ते हैं, वे भी दरिद्र ही रह जाते हैं । वे कोई महत्त्वपूर्ण, आदर्श पदाधिकार नहीं प्राप्त कर पाते ।

✻ जितेन्द्रिय होना, संयमी होना विद्यार्थी व साधकों के लिए अत्यावश्यक है ।

✻ युवावस्था के आरम्भ में जैसे-जैसे तीव्र गति से शक्ति बढ़ती है, वैसे-ही-वैसे इन्द्रियों में अपने विषयों की ओर चंचलता भी बढ़ती है; मान की, भोग की भूख प्रबल होती है । उस समय जो युवक विद्यार्थी अपनी शक्ति की अधोमुखी (नीचे की ओर विषयों के रास्ते प्रवाहित होनेवाली) गति को रोककर उद्यम, साहस आदि षड्गुणों के विकास में ही उसका सदुपयोग करता है अर्थात् शक्ति के विषयाकार प्रवाह को भाव-विकास, बुद्धि-विकास में बदल लेता है, उसीमें वास्तविक ज्ञानशक्ति प्रबल होती है । ऐसा युवक ही वीर पुरुष है ।

✻ तुम्हारी बुद्धिमत्ता तभी आदर्श और सराहनीय है कि जब तुम पहले परमेश्वर से संबंध जोड़ लो, फिर संसार से संबंध स्थापित करो । तभी तुम संसार में बंधन से मुक्त हो सकोगे । ❐

'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' ज्ञान पहेली

आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पर आधारित नीचे दिये गये रिक्त स्थानों की पूर्ति निम्न तालिका की मदद से कीजिये। उत्तर अगले अंक में प्रकाशित किये जायेंगे।

ज	प्र	ना	ता	द	की	घी	ज	ल	श
ल	ऊ	रु	द्रि	ह	घु	ल	न	क्षु	र्ज
ज	न	र्ध्व	वा	त	मे	नी	ग्या	जी	प्र
मि	न	पे	रे	ज्जा	म	ह	स	व	त
क्र	दी	की	न	ता	ब	उ	सिं	रा	नृ
ङ	रो	य	ए	क	त्कृ	स	की	र	षी
शु	थो	अं	प्न	ष्ट	रि	ख	ह	क्षु	न
सं	क्र	स्व	पा	छ	क्त	मे	चा	ब	ल
जी	ल	स्रा	द्री	रु	घु	ल	अ	व्य	प्र
सं	झ	क	व	ता	गु	ज	दे	तु	णा

१. ..... योगी के चरणों में समस्त सिद्धियाँ दासी बनकर रहती हैं।

२. ब्रह्मचर्य ..... तप है।

३. ..... का स्वैच्छिक या अनैच्छिक अपव्यय जीवनशक्ति का प्रत्यक्ष अपव्यय है।

४. हड्डी से ..... बनती है।

५. ''अमेरिका में दो करोड़ से अधिक लोगों को मानसिक चिकित्सा की आवश्यकता है।'' - .....

६. चेतना के चार स्तर हैं - जाग्रत, ... , सुषुप्ति और तुरीय।

७. राजा मुचुकुन्द दूसरे जन्म में ..... हुए।

८. ..... विद्या अंगारपर्ण ने अर्जुन को दी।

९. ''मैं प्रतिदिन गीता के पवित्र जल से स्नान करता हूँ।'' - .....

१०. लेडी मार्टिन ने बैजनाथ महादेव मंदिर में ग्यारह दिन का ..... अनुष्ठान करवाया।

पिछले अंक में प्रकाशित 'ढूँढ़िये संतों के नाम' पहेली का उत्तर : ज्ञानेश्वर, संत आसारामजी बापू, रामतीर्थ, एकनाथ, सूरदास, रमण महर्षि, मीराबाई, शंकराचार्य, आनंदमयी माँ, संत नामदेव, वेमना, समर्थ रामदास।

अक्ल लड़ाओ, ज्ञान बढ़ाओ

१. प्रगति का मैं घोर विरोधी,
असफलता का बाप।
मैं जीवित इंसान की मृत्यु,
नाम बतायें आप॥

२. देने से घटती नहीं, करिये जी भर दान।
छीने से छिनती नहीं, और देते बढ़ता मान॥

३. ऊँचे पर्वत पर जन्म ले चलूँ,
प्रयागराज में बहन से मिलूँ।
इठलाती बलखाती चलती,
अंत में मैं प्रीतम से मिलती॥

४. जिनके साथ मैं रहती हूँ,
हर मुश्किल सुलझा लेते।
साथ रहूँ न मैं जिनके,
वो खुद को उलझा लेते॥

५. मुझे अगर तुम जीत सको,
कोई न फिर तुमसे जीते।
मुझसे अगर तुम हार गये,
समझो सबसे हार गये॥

६. अल्पायु में पिता चल बसे,
गया गये करने पिंडदान।
ईश्वरपुरी के शिष्य बन गये,
मिला संत को आत्मज्ञान॥

(इन पहेलियों के उत्तरों हेतु प्रतीक्षा कीजिये अगले अंक की।)

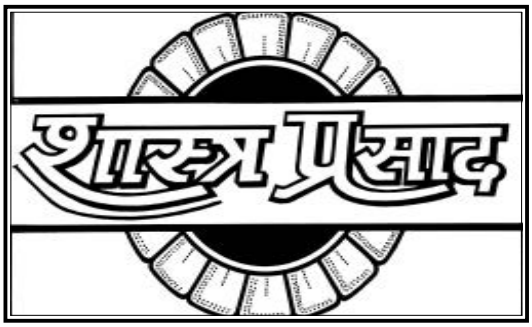

मन की समता

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मुद्गल नाम के ऋषि हो गये । वे बड़े पवित्रात्मा थे । उन्होंने व्रत ले रखा था । खेतों में पड़े हुए दाने बीन लेते थे । पन्द्रह दिन में करीब ३२ सेर दाने बन जाते थे । तब यज्ञ करते, ब्राह्मणों को भोजन कराते और यज्ञ से बचा हुआ प्रसाद ग्रहण करते थे । अमावस्या और पूनम को यज्ञ करते । पन्द्रह दिन परिश्रम करने से जो आजीविका मिलती थी, उसका जप-तप के साथ इन यज्ञों तथा अतिथि सत्कार में उपयोग करते थे और प्रसादरूप में खुद भी सेवन करते थे । मुद्गल की ऐसी कीर्ति सुनकर देवता लोग भी उनकी प्रशंसा करते थे । अपमान और भूख भले-भलों को उद्विग्न कर देते हैं लेकिन मुद्गल ऋषि बड़े शांत व प्रसन्न रहते थे । वे तो थे ही परंतु उनकी पत्नी भी उस सत्कार्य में सहयोग देती थी । उनके बच्चों ने भी मुद्गल ऋषि के अनुसार अपना जीवन ढाल दिया था । मुद्गल ऋषि की सहनशक्ति, धैर्य, शांति, सरलता, उदारता व तपस्या उनकी आँखों में एक अनोखा ओज भर रही थी । किसीको वे प्रेमभरी दृष्टि से निहारते तो सामनेवाले का दिल मुद्गल का हो जाता था । जैसे ज्ञानवानों की दृष्टि में आभा होती है, आकर्षण होता है, अद्भुत प्रेम और करुणा छुपी हुई होती है ऐसे ही मुद्गल करीब-करीब उस अवस्था को प्राप्त हो रहे थे । उनका यह प्रभाव व सद्गुण दुर्वासाजी के कानों तक पहुँच गया । ज्ञानवान दुर्वासा ऋषि हमेशा भक्तों के मनोबल, तपस्वियों के तपोबल, त्यागियों के त्यागबल की परीक्षा और उनको आगे बढ़ाने के लिए क्रोधी, परीक्षक, ऋषि, स्त्री या अर्धस्त्री का रूप बनाकर घूमते रहते थे । पता चला कि मुद्गल अच्छे हैं, श्रेष्ठ हैं तो चलो ! जो खूँटा गाड़ा जाता है, जिसके सहारे किसीको बाँधना है, उसे हिलाया जाता है कि वह मजबूत है कि नहीं ! अब एक लक्कड़ का टुकड़ा जिसके सहारे गाय, भैंस या बकरी बाँधनी है उसको बार-बार हिलाना पड़ता है तो जिसके सहारे समाज के लोगों का कल्याण करना है, दूसरों के जीवन में कुछ प्रकाश फैलाना है अथवा जिसके हृदय में ईश्वर को बाँधना है ऐसे साधक को सद्गुरु नहीं हिलायेंगे तो कौन हिलायेगा !

कटु, तिक्त वचन, पागलों-सा वेश... इस वेशभूषा में मुद्गल ऋषि के पास आकर दुर्वासा ऋषि ने डाँटते-फटकारते हुए कहा : ''ऐ मुद्गल ! तुझे पता होना चाहिए कि मैं भोजनप्राप्ति के हेतु ही तेरे पास आया हूँ ।''

मुद्गलजी : ''महाराज ! बड़ी कृपा हुई, धन्यभाग हमारे । विराजो ।''

यज्ञ करके तो गये थे । यज्ञ से बचा हुआ जो प्रसाद अपने बच्चे, पत्नी व अपने लिए था, उससे मुद्गल ऋषि ने दुर्वासाजी को बड़े आदर व श्रद्धा से भोजन कराया । उस भोजन से दुर्वासा ऋषि को बड़ा स्वाद आया, बड़ा रस आया क्योंकि एक तो पसीने का अन्न था, दूसरा यज्ञ-याग करने के बाद बचा था और तीसरा उसमें श्रद्धा थी, चौथा उसमें शांति थी, पाँचवाँ उसमें प्रेम भरा हुआ था । खाते-खाते महाराज ने सब भोजन सफा कर दिया, थोड़ा-सा बचा वह अपने अंगों को मल दिया । मुद्गलजी को देखा तो उनके चेहरे पर कोई रोष नहीं, कोई आश्चर्य नहीं, कोई अशांति नहीं, कोई खिन्नता नहीं ।

जिसे वो देना चाहता है, उसीको आजमाता है ।
खजाने रहमत के, इसी बहाने लुटाता है ॥

महाराज ! हम अपने चित्त को जरा देखें, हमने चौदह दिन भोजन न किया हो, पन्द्रहवें दिन होम-हवन करके अतिथियों, साधुओं को खिलाकर बाकी का बचा प्रसाद पाने को बैठें और आ जायें अतिथि । उनको हम खिलायें और वे हमारे सारे कुटुम्ब का भोजन खा जायें, जरा-सा बचा हो, वह अपने शरीर को चुपड़ने लग जायें तो हम डंडा लें कि थप्पड़ मारें, वह हमारे दिल की बात हम ही जानें उस समय ।

मुद्गल ऋषि को कोई क्षोभ, शोक या आश्चर्य नहीं हुआ । सोचा, 'ठीक है, ऋषि की, साधु की मौज !' दुर्वासा ऋषि ने देखा कि ये कुछ बोलते नहीं ! भोजन करके बोले : ''अच्छा मैं जाता हूँ । फिर कब बनता है ?''

''महाराज ! मेरा नियम है कि पूर्णिमा और अमावस्या को हवन-होम करके यज्ञ का प्रसाद लेते हैं ।''

''चिंता न करो, मैं आ जाऊँगा ।''

इस प्रकार दुर्वासा ऋषि छः बार आये । पन्द्रह दिन में एक बार आये तो छः बार के हुए तीन महीने । तीन महीने उस परिवार को बिना भोजन के रहना पड़ा, फिर भी उनके चित्त में क्षोभ नहीं । जरूरी नहीं कि अन्न से ही आपका शरीर पुष्ट रहता है । आपके अंदर पुष्ट रहने की, तंदुरुस्त रहने की, प्रसन्न रहने की कुंजी है तो प्रतिकूलता में भी आप सुखी रह सकते हैं । आपका मन जैसी धारणा बना लेता है वैसा ही आपके तन पर असर होता है । निष्काम सेवा से उनके चित्त में भूख और प्यास निवृत्त करने की एक रसायनी शक्ति उत्पन्न होने लगी । दुर्वासाजी प्रसन्न हो गये और बोल उठे : ''क्या चाहिए वत्स ! बोलो ।''

मुद्गल बोले : ''महाराज ! आपकी प्रसन्नता ही हमारे लिए सब कुछ है ।''

इतनी सेवा करने के पश्चात् भी महर्षि मुद्गल ने कुछ माँगा नहीं ! विचार कीजिये कि उनके विशुद्ध अंतःकरण में कितनी निष्कामता रही होगी ! दुर्वासा की प्रसन्नता से देवता और भी संतुष्ट हुए । स्वर्ग से देवदूत विमान लेकर आया और बोला : ''हे ऋषिवर ! आपका पुण्य इतना बढ़ गया है कि आप सशरीर स्वर्ग में पधारें । यज्ञ-याग करनेवालों को मरने के बाद तो स्वर्ग मिलता ही है लेकिन आपका धैर्य, समता, सहनशक्ति व संतोषी जीवन इतना है कि अब आप सशरीर स्वर्ग में पधारें ।''

मुद्गलजी पूछते हैं : ''स्वर्ग में क्या है ?''

''स्वर्ग में घूमने के लिए बाग-बगीचे हैं, अप्सराएँ हैं, पीने के लिए अमृत है, नाना प्रकार के व्यंजन हैं, भोग हैं, बस स्वर्ग तो स्वर्ग है !'' इस प्रकार देवदूत ने स्वर्ग की प्रशंसा की ।

''जहाँ गुण होते हैं वहाँ दोष भी होते हैं, जहाँ सुख होता है वहाँ दुःख भी होता है, जहाँ अच्छा होता है वहाँ बुरा भी होता है । तो अच्छाई-बुराई दोनों का वर्णन करो ।''

देवदूत ने कहा : ''ऐश्वर्य तो बता दिये, अब बुराई सुनिये कि वहाँ आपस में राग-द्वेष रहता है । अपने से बड़ों को देखकर भय, बराबरीवालों से ईर्ष्या-टक्कर और छोटेवालों से घृणा होती है और अंत में स्वर्ग तो क्या ब्रह्मलोक तक के भी जो भोग हैं, उन्हें भोगकर भी गिरना पड़ता है । वापस यहीं आना पड़ता है ।''

तब मुद्गल ऋषि कहते हैं :

''यत्र गत्वा न शोचन्ति न व्यथन्ति चलन्ति वा ।
तदहं स्थानमत्यन्तं मार्गयिष्यामि केवलम् ॥
(महाभारत वनपर्व : २६१.४४)

मैं उस विनाशरहित परम धाम को ही प्राप्त करूँगा, जिसे प्राप्त कर लेने पर शोक, व्यथा, दुःखों की आत्यंतिक निवृत्ति और परमानंद की प्राप्ति हो जाती है ।

मुझे स्वर्गलोक, ब्रह्मलोक या वैकुण्ठलोक में नहीं जाना है, मुझे तो अपने स्वरूप में आना है। जो कहीं जाने से मिले ऐसे पद को मुझे नहीं पाना है और जिसको पाने के बाद फिर गिराया जाय ऐसे सुख को मुझे नहीं पाना है। मैं तो उस सुख में डुबकी मारूँगा -

दिले तस्वीर है यार !

जब भी गर्दन झुका ली और मुलाकात कर ली।

शोक की आत्यंतिक निवृत्ति और परमानंद की प्राप्ति ! **न स पुनरावर्तते...** जहाँ से फिर पुनरागमन नहीं होता ऐसे आत्मपद में मुझे विश्रांति पाने दो। आप आये हैं, मुझे इन्द्रदेव ने आदर से बुलावा भेजा है, सबको धन्यवाद ! लेकिन मैं अपनी सेवा का पुरस्कार स्वर्ग नहीं चाहता। आप जहाँ से आये हो, कृपया वहाँ जा सकते हैं।'' और महर्षि ने देवदूत को सम्मानसहित विदाई दी।

महर्षि मुद्गल ने स्वर्ग का त्याग किया पर उसका अहंकार तक उनके मन में नहीं जगा। ऐसे ही भगवान के जो सच्चे भक्त होते हैं, वे दुःख सहते हैं, कष्ट सहते हैं लेकिन मन में कभी फरियाद नहीं करते, क्योंकि अंतर में निष्कामता जितनी अधिक होगी उतना ही परिशुद्ध आत्मरस उनमें प्रकट होता रहता है। अतः मन में दृढ़ निश्चय एवं सद्भावना भरते चलो कि 'भगवत्सेवार्थ ही आज से सारे कर्तव्य-कर्म करूँगा, वाहवाही के लिए नहीं। किसीको हलका (नीचा) दिखाने के लिए नहीं, कोई नश्वर चीज पाने के लिए नहीं, जो भी करूँगा परमात्मा के प्रसाद का अधिकारी होने के लिए, परमात्मा को प्रेम करने के लिए, परमात्मा के दैवी कार्य सम्पन्न करने के लिए ही करूँगा। इस प्रकार परमात्मा और ईश्वर-सम्प्राप्त महापुरुषों के दैवी कार्यों में अपने-आपको सहभागी बनाकर उस परम देव के प्रसाद से अपने-आपको पावन बनाता रहूँगा।' ❐

इक बूँद से राख की मुट्ठी तक...

इक बूँद से राख की मुट्ठी तक,
बस इतनी कहानी तेरी है।
ना बचपन था न बुढ़ापा होगा,
ना ही जवानी तेरी है॥
अबदल तू आत्मा है जान जरा,
तू शरीर नहीं जो बदलता है।
न अहं न ही मन है तू जिसमें,
पारे जैसी चंचलता है।
सुखरूप सहजता-शीतलता,
पावनता निशानी तेरी है॥ इक बूँद से...
दिन खाय बिताया है तूने,
क्या रात भी सो के गँवायेगा।
अब भी न लगी लौ सद्गुरु से,
तो अंत समय पछतायेगा।
जब काल का कोई वक्त नहीं,
तब तू क्यूँ लगाये देरी है॥ इक बूँद से...
आ चल ऐ मन गुरु चरनन में,
अब धूनी वहीं रमायेंगे।
रखकर के मस्तक चौखट पर,
हम अपना भाग्य बनायेंगे।
गुरुद्वार से तब ही उठेंगे,
कह देंगे वो आखिरी फेरी है॥ इक बूँद से...

- चाँद लखनवी

❊ भूल से ही शरीर को मैं मान रखा है। वास्तव में यह पंचभौतिक शरीर तुम नहीं हो। जाग सके तो जाग !

❊ ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः। ये जो जीव हैं मेरे वंशज हैं और सनातन हैं। जैसे प्रलय होता है, सृष्टियाँ मिटती हैं फिर भी मैं अमिट हूँ, ऐसे ही इन मेरे बच्चों के शरीर मिटते हैं, फिर भी वे अमिट हैं क्योंकि मेरी जाति के हैं।

जब भगवान कह रहे हैं कि आप मेरी जाति के हो तो भगवान को अपनी जातिवाला मानने में आपके बाप का जाता क्या है ! - पूज्य बापूजी

दूसरों के मंगल में हमारा मंगल

जून का महीना था । भयंकर गर्मी पड़ रही थी। एक तीक्ष्ण बुद्धि-सम्पन्न, मिलनसार एवं व्यवहारकुशल पढ़े-लिखे युवक को खूब भटकने पर भी नौकरी नहीं मिल रही थी। तपती धूप में वह नौकरी की तलाश में इधर-उधर भटक रहा था। भटकते-भटकते वह एक ऐसे मैदान से गुजरा जहाँ अपने में मस्त, बड़ा निश्चिंत एक वृद्ध घसियारा प्रभु के भजन गाता हुआ घास काट रहा था। वह युवक उस घसियारे के समीप गया और बोला : ''बाबा ! इस मामूली घास को बेचकर तुम अपने परिवार का निर्वाह कैसे करते होगे ?''

घसियारा थोड़ी देर चुप रहा और फिर मुस्कराते हुए बोला : ''बेटा ! भले मैं निर्धन हूँ लेकिन बड़ी इच्छा नहीं पालता। जो मिलता है उसीमें संतोष कर लेता हूँ।''

''बाबा ! तुम्हें अपनी गरीबी का क्षोभ नहीं होता ?''

''बेटा ! यदि मैं पढ़-लिखकर ऊँची आकांक्षाओंवाला व्यक्ति होता तो सम्भवतः क्षुब्ध ही रहता। तुम तो काफी पढ़े-लिखे लगते हो, फिर भला मैं तुम्हें क्या समझाऊँ ! हाँ, इतना अवश्य कहूँगा कि धन ही सब कुछ नहीं होता। संतोष धन से बढ़कर कोई धन नहीं है।''

वृद्ध घसियारा देखने में तो साधारण लगता था पर उसके उत्तर ने युवक के हृदय को झकझोर दिया। वह युवक कुछ देर तो अवाक्-सा उस घसियारे की ओर देखता रहा, फिर बोला : ''बाबा ! धन के अभाव में इच्छा होते हुए भी तुम कभी परोपकार कर सकोगे क्या ?'' वह वृद्ध घसियारा तपाक-से बोला : ''बेटा ! अच्छे एवं सच्चे व्यक्ति को परोपकार के लिए धन का अभाव कभी नहीं खटकता। मैं भीख माँगकर भी कुआँ खुदवाना चाहता हूँ। तपती दोपहरी में जब लोग ठंडा पानी पीकर तृप्त होंगे तो मेरे हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहेगा। मैं इस गरीबी में भी बहुत ही मजे में हूँ।''

यह सुनकर उस पढ़े-लिखे युवक का सिर श्रद्धा से झुक गया। वह विचारों में गहरा डूब गया और सोचने लगा, 'जिनका कहीं अंत नहीं, जिसमें कहीं तृप्ति नहीं, विश्रांति नहीं, ऐसी इच्छाओं-लालसाओं की आग में मैं बाहर-भीतर दोनों ओर से तप रहा हूँ और यह घसियारा रूखी रोटी खाकर भी मस्त है। अपनी पढ़ाई का अहंकार लेकर इस तपती दोपहरी में मैं द्वार-द्वार की धूल फाँक रहा हूँ और यह वृद्ध घसियारा अनपढ़ होकर भी मुझ पढ़े को जीवन-निर्माण का पाठ दे रहा है। पढ़-लिखकर मैं तो अपने में ही सिमट गया। मैंने कभी दूसरों की भलाई की चिंता ही नहीं की। मुझसे तो यह अनपढ़ घसियारा ही अच्छा है।' उस वृद्ध घसियारे के चंद वचनों ने उस युवक के जीवन का कायाकल्प कर दिया। उसने नौकरी का विचार त्यागकर अनपढ़ लोगों को पढ़ाना शुरू किया। छात्रों से मिली गुरुदक्षिणा से उसका जीवन चलता रहा और उसीमें उसे बड़ा आनंद आता था। आगे चलकर उसने नेपाली भाषा में 'रामायण' की रचना की, जो आज भी नेपाल में श्रद्धा से पढ़ी जाती है। अपनी कृति से वह युवक अमर हो गया उसका नाम था - भानु भक्त।

तुम दूसरों के लिए सोचते हो तो ईश्वर स्वयं तुम्हारी सहायता करता है। इसलिए मनुष्य को ऊँची आकांक्षाओं के मोह में न पड़कर जो मिले उसीमें संतोष करते हुए परोपकार में लगे रहना चाहिए। पूज्य बापूजी कहते हैं :

''आप दूसरे का मंगल करोगे तो आपका तो मंगल हो ही जायेगा क्योंकि जिसका आप मंगल करते हो उसके हृदय में बैठा हुआ दाता लुटाये बिना नहीं रहता।'' ❐

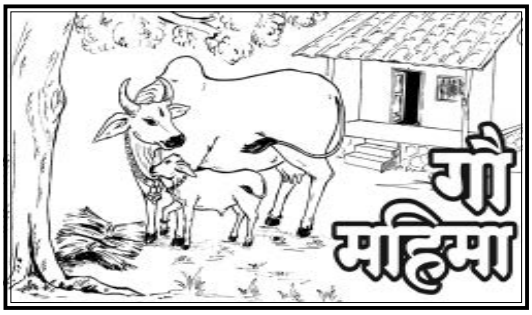

पृथ्वी का अमृत : गौदुग्ध

वेदों में कहा गया है :

गावो विश्वस्य मातरः । अर्थात् गाय सम्पूर्ण विश्व की माता है । महाभारत में भी आता है :

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः ।

'गौएँ सभी प्राणियों की माता कहलाती हैं । वे सभीको सुख देनेवाली हैं ।' **(महा. अनु. : ६९.७)**

गौमाता की सेवा भगवत्प्राप्ति के साधनों में से एक है । गौदुग्ध का सेवन करना भी गौ-सेवा है । जब गाय का दूध हमारा आवश्यक आहार हो जायेगा, तब उसकी आपूर्ति के लिए गौ-पालन तथा गौ-संरक्षण की आवश्यकता होगी । गाय के दूध, दही, घी, गौमूत्र तथा गोबर की विशेष महिमा है । अग्नि, भविष्य, मत्स्य, पद्म आदि पुराणों में गौदुग्ध की महिमा का वर्णन मिलता है । गौदुग्ध में जो विशेष पोषक तत्त्व पाये जाते हैं, वे अन्य किसीके भी (भैंस, बकरी आदि के) दूध में नहीं पाये जाते हैं ।

गाय का दूध धरती का साक्षात् अमृत है । यह सर्वोत्तम पेय तथा खाद्य-पदार्थों में सम्पूर्ण व सर्वश्रेष्ठ आहार के साथ ही अमूल्य औषधि भी है । मानव की शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्ति बढ़ानेवाला गाय के दूध जैसा कोई दूसरा आहार तीनों लोकों में नहीं है । इसमें तेजतत्त्व अधिक मात्रा में एवं पृथ्वीतत्त्व बहुत कम मात्रा में होने से इसका सेवन करनेवाला व्यक्ति प्रतिभा-सम्पन्न व तीव्र ग्रहण-शक्तिवाला हो जाता है । गाय का दूध स्वादिष्ट, स्निग्ध, सुपाच्य, मधुर, शीतल, रुचिकर, बल, बुद्धि व स्मृति तथा रक्तवर्धक, आयुष्यकारक एवं जीवनीय गुणदायक है । आचार्य वाग्भट्ट के 'अष्टांगहृदय' ग्रंथ में उल्लेख है कि सब पशुओं के दुग्धों में गाय का दुग्ध अत्यंत बलवर्धक और रसायन है ।

गव्यं तु जीवनीयं रसायनम् ।

मध्यकाल में अरब के चिकित्सकों ने और सन् १८६७ में रूस और जर्मनी के चिकित्सकों ने दूध के औषधीय महत्त्व को समझा । अमेरिका के डॉ. सी. करेल ने अन्य औषधियों से निराश सैकड़ों रोगियों को दुग्धामृत से स्वस्थ किया ।

विश्व का सबसे धनी व्यक्ति रॉकफेलर जब मेदरोग से पीड़ित हो गया तब किसी भी औषधि से उसे फायदा नहीं हुआ । उस समय गाय का दूध उसके लिए वरदान साबित हुआ ।

गौदुग्ध में पाये जानेवाले आवश्यक तत्त्व :

आचार्य सुश्रुत ने गौदुग्ध को जीवनोपयोगी तथा आचार्य चरक ने इसे जीवनशक्ति प्रदान करनेवाले द्रव्यों में सर्वश्रेष्ठ और रसायन कहा है : **प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम् ।** क्योंकि इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, उच्च श्रेणी की लैक्टोज शर्करा, खनिज पदार्थ, वसा आदि शरीर के सभी पोषकतत्त्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं । इसमें आवश्यक सभी एमीनो एसिड्स प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो अनाज, सब्जी, अण्डा व मांस की तुलना में उच्च गुणवत्तावाले होते हैं । दुग्ध-वसा अन्य वसाओं की तुलना में सुपाच्य होती है । रोज एक गिलास (२५० ग्राम) दूध पीने से शरीर की प्रतिदिन के कैल्शियम की ७५% आवश्यकता, बच्चों की विटामिन बी-१२ की ४०-६०% आवश्यकता, वयस्कों की वसा की २५-३०% आवश्यकता पूरी हो जाती है ।

स्ट्रांशियम केवल गौदुग्ध में ही पाया जाता है, जो एटम बम के अणु-विकिरणों (एटॉमिक रेडिएशन्स) के विषकारक प्रभाव का दमन करता है । दूध में विद्यमान 'सेरीब्रोसाइड्स' तत्त्व मस्तिष्क व बुद्धि-विकास में सहायक होते हैं । एम.डी.जी.आई. प्रोटीन शरीर की कोशिकाओं की कैंसर से रक्षा करता है ।

गौदुग्ध-सेवन से लाभ : यदि आप चाहते हैं कि आपके बच्चों का शरीर हृष्ट-पुष्ट, सुंदर एवं सुगठित हो, वे मेधावी और प्रचंड बुद्धि-शक्तिवाले

व विद्वान बनें तो उन्हें नियमित रूप से देशी गाय का दूध व मक्खन खिलायें-पिलायें । गाय का दूध वात, पित्त, कफ तीनों दोषों का शमन करनेवाला है । दूध शरीर की जलन को मिटाता है । अन्न-पाचन में सहायता करता है । शिशु से वृद्ध तक सभी उम्र के लोगों के लिए गौदुग्ध का सेवन हितकर है । छः माह से अधिक आयु के छोटे बच्चों को दूध में आधा भाग पानी मिलाकर उबाल के पिलाना चाहिए । दाँत निकलने की अवस्था में शिशुओं को दूध में जौ का पानी मिला के पिलाने से दूध सहज ही पच जाता है ।

दूध को खूब फेंटकर झाग पैदा करके धीरे-धीरे घूँट-घूँट पीना चाहिए । इसका झाग त्रिदोषनाशक, बलवर्धक, तृप्तिकारक व हलका होता है । अतिसार, अग्निमांद्य तथा जीर्णज्वर में यह बहुत लाभदायक है । नियमित गौदुग्ध-सेवन से नेत्रज्योति तथा स्मरणशक्ति में खूब वृद्धि होती है । दूध में गाय का घी मिलाकर पीने से मेधाशक्ति बढ़ती है । श्यामवर्ण की गाय का दूध विशेषरूप से वातशामक होता है । गाय को दुहते ही अविलम्ब वह दूध पीने से (धारोष्ण दुग्धपान से) अमृतपान के समकक्ष लाभ होता है :

धारोष्णममृतोपमम् ।
सद्यः शुक्रकरं धारोष्णं पयः ।

आयुर्वेद के अनुसार गाय का दूध, दही, घी, मक्खन व छाछ अमृत का भंडार हैं । एकमात्र गाय की ही रीढ़ में 'सूर्यकेतु' नाड़ी होती है । अन्य प्राणी व मनुष्य जिन्हें नहीं ग्रहण कर सकते उन सूर्य की गौकिरणों को सूर्यकेतु नाड़ी ग्रहण करती है । यह नाड़ी क्रियाशील होकर पीले रंग का एक पदार्थ छोड़ती है, जिसे 'स्वर्णक्षार' कहते हैं । इसी कारण देशी गाय का दूध, मक्खन व घी स्वर्ण-कांतियुक्त होता है । जो व्यक्ति जीवनपर्यंत देशी गाय के दूध का सेवन करते हैं, वे निःसंदेह स्वस्थ, वीर्यवान, बुद्धिमान, शक्तिशाली एवं दीर्घजीवी होते हैं तथा उनके विचारों में भी सात्त्विकता रहती है । देशी गाय का ही दूध हितकर है, जर्सी, होल्सटीन या उनकी संकर प्रजातियों का नहीं । डेयरी प्रक्रिया (जैसे - पाश्चुराइजेशन) से भी दूध का सात्त्विक प्रभाव व पोषक तत्त्व नष्ट होते हैं ।

गौदुग्ध के औषधीय प्रयोग

❊ **सिरदर्द** : दूध में सोंठ घिसकर सिर पर लेप करें ।

❊ **आँख दुखना** : गर्मी में आँख दुखने पर रात में आँखों की पलकों पर दूध के फाहे रखने से आँखों की लालिमा व गर्मी दूर होती है ।

❊ **अम्लपित्त** : अम्लपित्त के रोगी को दिन में दो-तीन बार ठण्डा दूध चुस्की लेते हुए थोड़ा-थोड़ा पीना चाहिए । दूध स्वाभाविक रूप से ठंडा किया हुआ हो, फ्रिज का नहीं ।

❊ **रक्तपित्त** (शरीर में अकारण कहीं से भी रक्तस्राव होने लगना) : कच्चे दूध में २ ग्राम गोखरू चूर्ण अथवा शतावरी या यष्टिमधु चूर्ण मिलाकर पीने से आराम होता है ।

❊ **कब्ज** : गर्म दूध के साथ ईसबगोल या गुलकंद लेने से कब्ज व बवासीर में लाभ होता है ।

❊ **आँतों के रोग** : भोजन के पहले एक चम्मच हलका गर्म दूध लेकर धीरे-धीरे पेट व नाभि पर मलें । एक घंटे तक विश्राम करने के बाद भोजन करें । इसके बाद पेशाब करने से आँतों में होनेवाला शोथ एवं अन्य रोग दूर हो जाते हैं तथा आँतें मजबूत होती हैं ।

सावधानियाँ :

१. दूध को अधिक देर तक तथा तेज आँच पर गर्म करने से उसके पोषक तत्त्वों में कमी आती है ।

२. फीका दूध पीना अधिक लाभप्रद होता है । चीनी मिलाने से शरीर में कैल्शियम की मात्रा कम हो जाती है तथा कफ की वृद्धि होती है ।

३. दूध में गुड़ डालकर कभी भी सेवन न करें, इससे त्वचा-विकार तथा प्रमेह हो सकता है ।

४. दमा, दस्त, पेचिश, पेटदर्द, अपच, नया बुखार, त्वचा-विकार आदि रोगों में दूध न पियें ।

५. फल, दालें, खट्टे व नमकयुक्त पदार्थों तथा मांसाहारी भोजन के साथ दूध का सेवन नहीं करना चाहिए । इससे असंख्य रोग उत्पन्न होते हैं । भोजन व दुग्धपान में कम-से-कम दो घंटे का अंतर अवश्य रखना चाहिए । ❐

तू तो क्या तेरा पति भी आयेगा !

पूज्यश्री के श्रीचरणों में कोटि-कोटि वंदन !

सन् १९८५ में मेरी पत्नी ने पूज्य बापूजी से दीक्षा ली थी । दीक्षा लेते समय उसने सोचा कि 'मेरे पति तो बापूजी को नहीं मानते ।' अंतर्यामी बापूजी ने उस पर कृपापूर्ण नजर डालते हुए कहा : ''तू तो क्या तेरा पति भी मानने लग जायेगा और वह तो ऐसा लगेगा कि देखती रहना !''

थोड़े दिनों के बाद उनकी कृपा से मुझे भी भक्ति का रंग लगने लगा और मैंने भी दीक्षा ले ली । पूज्य बापूजी के श्रीवचन अक्षरशः सत्य हुए ।

एक आदमी मेरे पैसे नहीं दे रहा था । मैंने बड़दादा की मन्नत मानी कि 'यदि रुपये मिल गये तो मैं पाँच रविवार दर्शन करने आऊँगा ।' मेरे रुपये तो मिल ही गये पर बापूजी के दर्शन और सत्संग का भी लाभ मिला ।

पहले मेरे पास एक छोटी-सी पान की दुकान थी और किराये के घर में रहता था । जब से मैं बापूजी के श्रीचरणों में आया और **'ऋषि प्रसाद'** पत्रिका-वितरण की सेवा करने लगा तब से दिन दूनी, रात चौगुनी सुख-शांति, समृद्धि बढ़ रही है । मैं बहुत सुखी एवं आनंदित हूँ । जहाँ कोई उम्मीद नहीं होती, वहाँ भी सफलता मिल जाती है । गुरुकृपा से लौकिक लाभों के साथ मुझे अनेकों अलौकिक लाभ भी हुए हैं । हम १६ लोगों ने लगभग १५,००० सदस्य बनाये और हमें पूज्य बापूजी के करकमलों द्वारा स्वर्ण-पदक प्राप्त करने का भी सौभाग्य मिला । अभी भी मैं **'ऋषि प्रसाद'** पत्रिका बाँटने की सेवा करता हूँ । सेवा के दौरान हम लोगों को महसूस होता है कि कोई दिव्य शक्ति हमारे साथ है ।

ऋषि प्रसाद की सेवा में, जो साधक डट जाते हैं ।
होती उनकी सदा दिवाली, दुःख के पहाड़ हट जाते हैं ॥

– दिनेश भाई जोशी, अहमदाबाद ।
मो. नं. : ८९०५५९९९२२.

तुलसी माला बनी रक्षा-कवच

हम पति-पत्नी दोनों ने पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा ली है । एक बार मैं गोरेगाँव (मुंबई) आश्रम में बड़दादा की परिक्रमा कर रही थी । वहाँ एक भाई पूछ रहे थे कि 'कौन-कौन **'ऋषि प्रसाद'** की सेवा करने के इच्छुक हैं ?' मुझे किसी अदृश्य शक्ति ने प्रेरणा दी कि 'तू हाँ कर दे ।' मैंने भी सौ सदस्य बनाने का संकल्प किया । संकल्प पूरा होने पर मुझे गुरुदेव के प्रसादरूप में तुलसी की माला मिली । घर आने पर माला देखते ही मेरे पतिदेव बोले, 'मुझे लगता है बापूजी ने यह माला मेरे लिए ही दी है ।' मैंने वह माला उनको दे दी । अगले दिन वे स्कूटर से ऑफिस जा रहे थे । अचानक सामने से तेल का एक टैंकर अनियंत्रित दशा में आता नजर आया । उनका स्कूटर नियंत्रण से बाहर हो गया और वे टैंकर से टकराकर गिर गये । आसपास खड़े लोगों ने देखते ही कहा, 'यह तो गया !' पतिदेव का हाथ उस तुलसी की माला पर गया । वे प्रार्थना करने लगे, 'हे प्रभु ! यह क्या हो रहा है ? मेरी रक्षा करो ।' उसी क्षण पूज्य बापूजी सामने प्रकट हो उन्हें सड़क के किनारे करके अदृश्य हो गये । पतिदेव के कपड़े पेट्रोल में भीगकर काले हो गये थे और फट गये थे किंतु शरीर पर एक भी चोट नहीं थी । पूज्य बापूजी की कृपा से मेरे पतिदेव के प्राणों की रक्षा हुई और वे बाल-बाल बचे ।

तब से मैंने निश्चय कर लिया कि जिस सेवा से मेरे पतिदेव की रक्षा हुई, वह सेवा और ज्यादा करूँगी और लोगों तक पूज्य बापूजी का कृपा प्रसाद यह 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका पहुँचाऊँगी । सर्वसमर्थ, भक्तों के रक्षक, परम दयालु सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम ! **– रुचि सिंग**

कोलाबा, नेवी नगर, मुंबई ।
मो. नं. : ८१०८७७४८७७ ❐

बच्चों को प्रभावशाली बनाने का राज

१८ से २१ नवम्बर २०१० तक बड़ौदा में

पूज्य बापूजी का सत्संग-कार्यक्रम हुआ था। वहाँ मेरी बेटी वृषाली की सतर्कता, क्रियाशीलता, स्फूर्ति एवं फोटो खींचने की कुशलता आदि देखकर पूज्य बापूजी बहुत प्रसन्न हुए और बोले : ''बेटा ! तू कौन-सी कक्षा में पढ़ती है ?''

वृषाली ने कहा : ''छठी कक्षा में।''

बापूजी ने चकित होकर पूछा : ''तेरी उम्र कितनी है ?'' उसने कहा : ''ग्यारह साल।''

इतनी छोटी आयु में मेरी बेटी की अच्छी-खासी लम्बाई और कार्यकुशलता देखकर बापूजी आश्चर्यचकित हो गये। बापूजी ने मुझसे पूछा : ''ग्यारह साल की बच्ची इतनी चपल, होशियार और प्रभावशाली कैसे ?''

मैंने कहा : ''बापूजी ! मैंने आपके सत्संग में सुना था कि नवजात शिशु का स्वागत कैसे करना चाहिए। इसके जन्म के समय वैसा ही किया था। यह सब बापूजी की ही कृपा का फल है।''

बापूजी बताते हैं कि 'बच्चे के जन्म के समय नाभि-छेदन तुरंत नहीं बल्कि ४-५ मिनट के बाद करना चाहिए। उसके बाद बच्चे की जीभ पर सोने की सलाई से शहद और घी के विमिश्रण (दोनों की मात्रा समान न हो) से 'ॐ' लिखना चाहिए, फिर बच्चे को पिता की गोद में देना चाहिए। पिता को उसके कान में यह मंत्र बोलना चाहिए : **'अश्मा भव। परशुः भव। हिरण्यमयस्त्वं भव।'** इससे बच्चे दूसरे बच्चों से अलग व प्रभावशाली होते हैं।'

उसका नाभि-छेदन और जिह्वा पर 'ॐ' लिखना आदि सभी प्रयोग बापूजी के निर्देशानुसार हुए। वृषाली को ६ साल की उम्र में दीक्षा दिला दी थी। (अभी उसकी उम्र ११ साल है और ऊँचाई ५ फुट ९ इंच तथा वजन ४९ किलो है।)

– लता एम. भालिया, बड़ौदा, (गुज.).
मो. नं. : ९४२८०७१७९५.

नोबल शांति पुरस्कार मिला अब परम शांति पुरस्कार चाहिए

पूज्य गुरुदेव भगवान के श्रीचरणों में साष्टांग दण्डवत् प्रणाम !

मैं वर्तमान में 'भारतीय प्रबंध संस्थान अहमदाबाद' (IIMA) में प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हूँ। मेरा सौभाग्य है कि मुझे पूज्य बापूजी से गुरुदीक्षा मिली। गुरुमंत्र के नियमित जप से मुझे आध्यात्मिक और सांसारिक हर क्षेत्र में अच्छी सफलता मिली। जलवायु परिवर्तन संबंधी खोज में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए सन् २००७ में मुझे प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा सम्मानित किया गया। इसी वर्ष विश्व में श्रेष्ठतम माना जानेवाला 'नोबल शांति पुरस्कार' जीतनेवाली IPCC टीम का मैं भी एक सदस्य था। सन् २०१० में IIMA द्वारा उच्चकोटि के अनुसंधान के लिए अति विशिष्ट युवा व्याख्याता के पुरस्कार से मुझे पुरस्कृत किया गया। यह सब केवल बापूजी की दीक्षा व कृपा का फल है। पूज्य गुरुदेव साक्षात् ज्ञानमूर्ति परब्रह्म हैं और हमारा ज्ञान उनके ज्ञान के आगे करोड़वें हिस्से से भी अत्यंत छोटा है। आपके सत्संग से मुझे अपने मैनेजमेंट विषय तथा शोध के बारे में अंतर्दृष्टि और महत्त्वपूर्ण संकेत मिलते हैं, जिनका समुचित उपयोग मैं सफलतापूर्वक अपनी कक्षा में तथा अनुसंधान के कार्यों में करता हूँ।

पूज्य गुरुदेव से मेरी प्रार्थना है कि 'गुरुदेव ! आपकी जो इच्छा हो वह रह जाय, मेरी हो सो जल जाय।' बस हमें और कुछ नहीं चाहिए।

– अमित गर्ग, अहमदाबाद।
मो. नं. : ९४२८४०४९६७ ❐

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

२७ मार्च को **शाहजहाँपुर (उ.प्र.)** वासियों को सत्संग प्राप्त हुआ । सत्संग का बल हमें जीवन में कैसा समस्याप्रूफ रखता है यह बताते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''जो सत्संग सुनता है, उसका आदर करता है, वह बड़ी-बड़ी आपदाओं में भी उनसे खिलौने की नाईं खेलता रहता है । वे उसका बल बढ़ाकर चली जाती हैं । जो सत्संग नहीं सुनता अथवा अमल नहीं करता, उसको छोटी-छोटी आपदाएँ भी बड़ी मुसीबत लगती हैं । दुनिया में ऐसी कोई आपदा नहीं है जो तुम्हारे आत्मा को दबोच सके । दुनिया में ऐसा कोई दुःख नहीं जो तुम्हें दुःखी कर सके ।''

२८ मार्च को **बरेली (उ.प्र.)** में बही सत्संग-वर्षा से वहाँ की जनता लाभान्वित हुई । श्रीमद् भगवद्गीता के माहात्म्य पर प्रकाश डालते हुए बापूजी उवाच : ''गीता का एक श्लोक भी अगर ठीक से समझ में आ जाय तो आप दुःखी होना चाहो तो भी नहीं हो सकते । सुख को भगाना चाहो तो भी नहीं भगा सकते । दुःख टिका नहीं सकते और सुख को मिटा नहीं सकते, ऐसा गीता का ज्ञान है । और जो गीताकार के वचनों का आदर नहीं करता वह सुख पकड़ते-पकड़ते मर जाता है, सुख टिकता नहीं । दुःख भगाते-भगाते खुद ही भाग जाता है मौत के मुँह में, दुःख भागता नहीं । मरते समय भी दुःखी होकर ही मरता है ।''

३० मार्च को **हल्द्वानी (उत्तराखण्ड)** व **३१ मार्च** को **काशीपुर (उत्तराखण्ड)** में सत्संग सम्पन्न हुआ । **१ अप्रैल** को **मुरादाबाद (उ.प्र.)** की जनता को भगवत्प्रेम से जीवन को भगवन्मय बनाने की युक्ति बापूजी ने बतायी : ''भगवत्प्रेम से ही जीवन जीने की कला आती है । जिसके जीवन में भगवत्प्रेम नहीं आया वह विकारों में गिर-गिर के तुच्छ हो जाता है और भगवत्प्रेम आया तो विकारों से जूझते-जूझते देर-सवेर भगवान को पा लेता है ।''

४ व ५ अप्रैल (दोप.) को **उल्हासनगर (महा.)** में बापूजी के सान्निध्य में 'चेटीचंड महोत्सव' सम्पन्न हुआ । यहाँ सिंधी समाज द्वारा आयोजित भव्य संकीर्तन यात्रा को पूज्यश्री के करकमलों से हरी झंडी मिली और सभी झूमने लगे । पूरे क्षेत्र का सिंधी समाज कृतकृत्य हो गया कि पूर्णपुरुष हमारे साँईंजी ने हमारे इस उत्सव की सुवास विश्व भर में हो रहे अपने सत्संग के सजीव प्रसारण द्वारा सम्पूर्ण विश्व में फैला दी । विदाई की वेला में सभी गद्गद थे धन्यवाद से, अहोभाव से । धनभागी हैं उल्हासनगर और महाराष्ट्र की चेटीचंड पंचायतें !

चेटीचंड के अवसर पर उल्हासनगर में आनंद-उल्लास बिखेरकर **५ अप्रैल** की **दोपहर** में बापूजी का **अहमदाबाद** में शुभागमन हुआ । बड़ी संख्या में अहमदाबाद का सिंधी समाज शोभायात्रा निकालकर हवाई अड्डे पर पहुँचा और ढोल-नगाड़ों व पुष्पवर्षा से अपने प्यारे साँईंजी का स्वागत किया । उनके आग्रह पर पूज्यश्री सजाये हुए रथ में विराजे और उपस्थित श्रोताओं भगवान झुलेलाल के तात्त्विक सत्संग से मंत्रमुग्ध किया ।

५ से ७ अप्रैल तक **अहमदाबाद** में चेटीचंड महोत्सव सम्पन्न हुआ । बड़ी संख्या में देशवासियों ने सत्संग-लाभ लिया । पूज्यश्री के वचनामृत में आया : ''जीव का जन्म होता है, भगवान का अवतार होता है । जीव कर्मबंधन से, वासना के प्रभाव से जन्मता है और ईश्वर मुक्त स्वभाव से अवतरित होता है, प्रेमवश, करुणावश सुव्यवस्था के लिए अवतरित होता है ।''

७ अप्रैल से दिल्ली, ९ (शाम) से देहरादून व १० (शाम) से ऋषिकेश, १२ (सुबह) से हरिद्वार और १४ (दोप.) से दिल्ली में बापूजी का एकांतवास रहा ।

१५ से १७ अप्रैल तक **बहादुरगढ़ (हरि.)** में पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग-महोत्सव सम्पन्न हुआ । वर्षों बाद सत्संग का सौभाग्य प्राप्त कर सभी कृतकृत्य हुए । वास्तविक विकास के बारे में विवेक जगाते हुए पूज्यश्री बोले : ''विकास, विकास, विकास !... क्या विनाश के जामे का नाम विकास है ! सच्चे विकास का मापदण्ड यह है कि तुम्हारे जीवन में संयम कितना है, सहजता कितनी है,

परिस्थितियों के आँधी-तूफानों में आप निश्चिंत नारायण की स्थिति में कितने रह सकते हैं।''

१७ व १८ अप्रैल को चैत्री पूर्णिमा के अवसर पर **वलसाड़ (गुज.)** में पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। हनुमान जयंती के शुभ अवसर पर पूज्यश्री ने पवनपुत्र हनुमानजी के महान सेवाधर्म पर प्रकाश डाला। **१८ अप्रैल** की **शाम** को **हिंगलाज** में पूज्य बापूजी का पदार्पण हुआ और पलक-पाँवड़े बिछाये हजारों की संख्या में प्रतीक्षारत भक्तों की मनोकामना पूर्ण हुई। यहाँ पूज्यश्री के करकमलों से नवनिर्मित सुंदर गुरुमंदिर का उद्घाटन व हृदयस्पर्शी सत्संग सम्पन्न हुआ।

तत्पश्चात् पूज्य बापूजी समुद्र-तट पर स्थित **दांडी आश्रम** पहुँचे जहाँ पर दांडी व आसपास के गाँवों से हजारों की संख्या में भक्तों का हुजूम अलख के औलिया पूज्य बापूजी के दर्शन-सत्संग के लिए एकत्र हुआ था। रात्रि-निवास पूज्यश्री ने भैरवी आश्रम में किया।

१९ अप्रैल की **सुबह** पूज्यश्री **जोगवेल** पहुँचे जहाँ विशाल भंडारा सम्पन्न हुआ। भंडारे में चावल, शक्कर, तेल, हॉटकेस (भोजन गर्म रखनेवाले टिफिन), स्टील की बर्नियाँ व डिब्बे, बच्चों व बड़ों के कपड़े, टोपियाँ, चप्पलें इत्यादि जीवनोपयोगी सामग्री बाँटी गयी। सामान की किट के साथ सभीको नकद राशि भी मिली। पूर्णाहुति के क्षणों में गरीब-गुरबे, आदिवासी लौट रहे थे अपने-अपने घर, सिर पर प्रसादस्वरूप मिली वस्तुओं की गठरी, दिल में भगवद्ज्ञान की मिठास एवं मुख पर खुशी की मुस्कान लिये... ! उनमें से एक-दो को बुलाकर कहीं कोई चीज छूटी तो नहीं, सेवकों के सेवाधर्म में कोई कमी तो नहीं रह गयी, इस उद्देश्य से पूज्य बापूजी ने उनकी गठरियों का अवलोकन किया। धन्य है पूज्यश्री की सूक्ष्म दृष्टि, सेवाधर्म की गहराई और दीनवत्सलता !

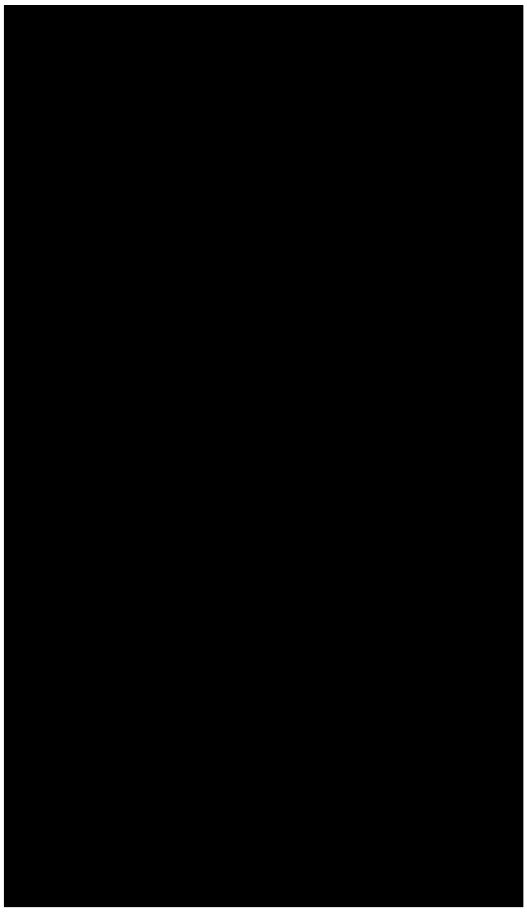

१९ अप्रैल की **दोपहर** में **शिरपुर (महा.)** में सत्संग कर रात्रि को पूज्यश्री का **प्रकाशा आश्रम (महा.)** में आगमन हुआ। आते ही सत्संग के लिए प्रतीक्षारत भक्तों को पूज्यश्री ने सत्संग-अमृत का पान कराया। **२० व २१ अप्रैल (दोप.)** को यहाँ तीन सत्रों में सत्संग हुआ।

२१ अप्रैल की **दोपहर** में **दोंडाईचा (महा.)** के आश्रम-संचालित **गौ-रक्षा केन्द्र (गौशाला)** को पूज्यश्री ने भेंट दी। **दोंडाईचा आश्रम** में सत्संग का एक सत्र सम्पन्न हुआ। **२१ अप्रैल** की **शाम** को पूज्यश्री **धुलिया (महा.)** पहुँचे एवं वहाँ के लोगों को अपनी अमृतवाणी से तृप्त किया।

इस वर्ष पूज्य बापूजी के अवतरण-दिवस २३ अप्रैल के शुभ दिन बापूजी का सत्संग-सान्निध्य पाने के लिए इंदौरवासियों ने खूब अनुनय-विनय की। ब्रह्मज्ञ श्रीरामजी के श्रीमुख से नवधा भक्ति और भगवद्ज्ञान का उपदेश पाने के लिए शबरी को भले कई वर्षों तक प्रतीक्षा करनी पड़ी परंतु इंदौरवासियों का सौभाग्य देखिये कि सद्गुरु आशारामजी के श्रीमुख से प्रवाहित प्रेमाभक्ति, आत्मज्ञान एवं कर्मयोग की त्रिवेणी का रसपान करने

का सुवर्ण अवसर कितना शीघ्र पा लिया ! **२२ से २४ अप्रैल** तक **इंदौर** में कर्मियों ने कर्मनिष्ठा, भक्तों ने भक्तिरस, जिज्ञासुओं ने तत्त्वजिज्ञासा और गुरुप्रेमी भक्तों-साधकों ने भगवान वेदव्यासजी की कुंजी **'एतत् सर्वं गुरोर्भक्त्या'** को हृदय में बसा के सर्व रसों का छककर आस्वादन किया ।

पूज्यश्री ने आत्मानुभव के पट कुछ खोल दिये तो वाणी निःशब्द को शब्दों में उतारने का अजूबा दिखाने लगी : ''सुख-दुःख जाते हैं, बचपन व जवानी जाती है, सफलताएँ-विफलताएँ जाती हैं लेकिन अपना-आपा कभी नहीं जाता । जो कभी नहीं जाता वह अपना पिया है, प्रभु है ॐ... उसमें टिककर जो कर्म करता है उसके कर्म दिव्य हो जाते हैं । उस प्रभु के नाते जो दूसरों के मंगल में लगता है उसके जन्म-कर्म दिव्य हो जाते हैं । महापुरुषों और भगवान की जयंतियाँ मनाने से हमें अपने जन्म और कर्म दिव्य बनाने का अवसर मिलता है ।''

२४ अप्रैल को उज्जैन में रात्रि-विश्राम कर पूज्यश्री **२५** को **देवास** पहुँचे एवं सत्संग-वर्षा की । **२६** को **आष्टा** में भगवद्ज्ञान लुटाकर पूज्यश्री भोपाल पहुँचे और **२७ अप्रैल** को **विदिशा (म.प्र.)** में ज्ञानामृत की गंगा प्रवाहित हुई । ❐

'स्वाध्याय'

रिक्त स्थानों के उत्तर खोजने के लिए इस अंक को ध्यानपूर्वक पढ़िये । उत्तर अगले अंक में ।

(१) ..... के मार्गदर्शन में जीवन जीने से मनुष्य समस्त आपदाओं से पार हो जाता है ।

(२) ..... से सारे पाप जल जाते हैं ।

(३) जीवन में जितनी तड़क-भड़क बढ़ेगी, ...उतनी ही चंचल हो उठेंगी ।

(४) जितनी-जितनी .... बढ़ती है उतना-उतना जीव छोटा होता जाता है ।

(५) सब तीर्थ करने व व्रत रखने की अपेक्षा ..... बनकर नाम-सुमिरन करना उत्तम है ।

(६) 'यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और ..... को निराहार रहे तो वह सब पापों से छूट जाता है ।'

(७) अपने क्रोधी स्वभाव पर विजय पाने के लिए .....एक समर्थ और सबल शस्त्र है ।

(८) तुम दूसरे का ..... करोगे तो आपका तो मंगल हो ही जायेगा । ❐

पिछले अंक के 'स्वाध्याय' के उत्तर : १. भीतर की समझ २. त्याग ३. कर्मबंधन ४. परमानंदप्राप्ति ५. सच्चरित्रता ६. आत्मदृष्टि ७. अहित ८. गुरु

प्रवेश-प्रारम्भ

संत श्री आशारामजी गुरुकुल, अहमदाबाद

(शैक्षणिक-सत्र : २०११-१२)

(आवासीय व गैर-आवासीय छात्रों के लिए)

कक्षा ४ से १२ : विज्ञान व सामान्य प्रवाह (गुजराती माध्यम)

कक्षा ४ से ११ : विज्ञान प्रवाह (हिन्दी माध्यम)

सेवा का शुभ अवसर...

गुजराती एवं हिन्दी माध्यम में सभी विषयों के लिए एम.ए./एम.कॉम./एम.एससी., बी.एड., चित्रकला (ए.टी.डी.), संगीत विशारद की शैक्षणिक योग्यतावाले पूज्य बापूजी से दीक्षित अनुभवी शिक्षकों के लिए । दक्षिणा (वेतन) योग्यतानुसार दी जायेगी ।

आवेदन-पत्र के साथ प्रमाण-पत्र एवं शैक्षणिक अनुभव की प्रामाणित प्रतियाँ व अपना फोटो २५ मई तक भेजें ।

पता : संत श्री आशारामजी गुरुकुल, मोटेरा, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५. फोन नं. : (०७९) ३९८७७७८५-८६.

दिव्य प्रेरणा-प्रकाश ज्ञान प्रतियोगिता-२०११

इस वर्ष की प्रतियोगिता के नये पहलू :

❊ कक्षा ५ से ७वीं के लिए जीवन विकास, बाल संस्कार साहित्य एवं कक्षा ८ से १२वीं, स्नातक वर्ग के लिए जीवन विकास, दिव्य प्रेरणा-प्रकाश पर आधारित परीक्षा होगी ।

❊ राज्य स्तर पर अधिकतम पंजीकरण करवानेवाली समिति को भी पुरस्कार ।

❊ राष्ट्रीय विजेताओं को (तीन विजेता कक्षा ८ से १२ में से और तीन स्नातक वर्ग से) और सर्वाधिक विद्यार्थी पंजीकरण करनेवाली तीन, एक मेट्रो समिति को पूज्यश्री के करकमलों से पदक व पुरस्कार ।

अन्य नियम पिछले वर्ष की प्रतियोगिता के अनुसार ही रहेंगे ।

सम्पर्क करें : बाल संस्कार विभाग, अहमदाबाद ।

फोन : ०७९-३९८७७७४९, २७५०५०१०-११.

विस्तृत जानकारी देखें : www.ashram.org